

Chapter-7 भू-आकृतियाँ तथा उनका विकास

पाठ्य-पुस्तक के प्रश्नोत्तर

1. बहुवैकल्पिक प्रश्न

प्रश्न (i) स्थलरूप विकास की किस अवस्था में अधोमुख कटाव प्रमुख होता है?

- (क) तरुणावस्था ।
- (ख) प्रथम प्रौढ़ावस्था
- (ग) अन्तिम प्रौढ़ावस्था ।
- (घ) वृद्धावस्था

उत्तर-(क) तरुणावस्था।

प्रश्न (ii) एक गहरी घाटी जिसकी विशेषता सीढ़ीनुमा खड़े ढाल होते हैं, किस नाम से जानी जाती है?

- (क) 'U' आकार घाटी ।
- (ख) अन्धी घाटी
- (ग) गॉर्ज
- (घ) कैनियन

उत्तर-(ग) गॉर्ज। ।।

प्रश्न (iii) निम्न में से किन प्रदेशों में रासायनिक अपक्षय प्रक्रिया यान्त्रिक अपक्षय प्रक्रिया की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली होती है?

- (क) आर्द्र प्रदेश
- (ख) शुष्क प्रदेश
- (ग) चूना-पत्थर प्रदेश
- (घ) हिमनद प्रदेश

उत्तर-(क) आर्द्र प्रदेश।

प्रश्न (iv) निम्न में से कौन-सा वक्तव्य लैपीज (Lapies) को परिभाषित करता है?

- (क) छोटे से मध्य आकार के उथले गर्त
- (ख) ऐसे स्थलरूप जिनके ऊपरी मुख वृत्ताकार वे नीचे से कीप के आकार के होते हैं।
- (ग) ऐसे स्थलरूप जो धरातल से जल के टपकने से बनते हैं।
- (घ) अनियमित धरातल जिनके तीखे कटक व खाँच हों ।

उत्तर-(घ) अनियमित धरातल जिनके तीखे कटक व खाँच हों।

प्रश्न (v) गहरे, लम्बे व विस्तृत गर्त या बेसिन जिनके शीर्ष दीवारनुमा खड़े ढाल वाले व किनारे खड़े व अवतल होते हैं उन्हें क्या कहते हैं?

(क) सर्क

(ख) पाश्विक हिमोढ़

(ग) घाटी हिमनद

(घ) एस्कर

उत्तर-(क) सर्क।

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 30 शब्दों में दीजिए

प्रश्न (i) चट्टानों में अधः कर्तित विसर्प और मैदानी भागों में जलोढ़ के सामान्य विसर्प क्या बताते हैं?

उत्तर-बाढ़ प्रभावी मैदानी क्षेत्रों में नदियाँ मन्द ढाल के कारण वक्रित होकर बहती हैं, इसलिए पार्श्व अपरदन अधिक करती है और सामान्य विसर्प का निर्माण होता है जो अधिक चौड़ा होता है। तीव्र ढाल वाले चट्टानी भागों में नदियाँ पार्श्व अपरदन की अपेक्षा अधोतल या गहरा अपरदन करती हैं, इसलिए जो विसर्प बनते हैं वे अधिक गहरे होते हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि चट्टानी भागों में अधःकर्तित विसर्प को गहरा होने के कारण गॉर्ज या कैनियन के रूप में देखा जा सकता है जबकि मैदानी भागों में यह सामान्य विसर्प होते हैं। क्योंकि दोनों क्षेत्रों में भिन्न उच्चावच/ढाल के कारण नदी अपरदन की प्रकृति में परिवर्तन हो गया है।

प्रश्न (ii) घाटी रन्ध्र अथवा युवाला का विकास कैसे होता है?

उत्तर-चूना-पत्थर चट्टानों के तल पर घुलन क्रिया के कारण छोटे व मध्यम आकार के छिद्रों से घोल गर्यो का निर्माण होता है। घुलन क्रिया की अधिकता एवं कन्दराओं के गिरने से इनका आकार बढ़ता जाता है तथा ये परस्पर मिलते जाने से बहुत बड़ा आकार ग्रहण कर लेते हैं। इनके आकार विस्तार के आधार पर ही इन्हें भिन्न नामों से जाना जाता है; जैसे—विलियन रन्ध्र, घोल रन्ध्र आदि। अतः जब विभिन्न घोल रन्ध्रों के नीचे बनी कन्दराओं की छत गिरती है तो विस्तृत खाइयों का विकास होता है जिन्हें घाटी रन्ध्र (Valley Sinks) या युवाला (Uvalas) कहते हैं।

प्रश्न (iii) चूनायुक्त चट्टानी प्रदेशों में धरातलीय जल प्रवाह की अपेक्षा भौमजल प्रवाह अधिक पाया जाता है, क्यों?

उत्तर-चूनायुक्त चट्टानें अधिक पारगम्य एवं कोमल होती हैं। इन चट्टानों पर भूपृष्ठीय जल छिद्रों से होकर भूमिगत जल के रूप में क्षैतिज रूप से प्रभावित होता है, क्योंकि इन चट्टानों की प्रकृति जल को नीचे की ओर स्रवण करने की है। अतः चूनायुक्त चट्टानों में मेल प्रक्रिया के कारण धरातलीय जल प्रवाह की अपेक्षा भौमजल प्रवाह अधिक पाया जाता है।

प्रश्न (iv) हिमनद घाटियों में कई रैखिक निक्षेपण स्थलरूप मिलते हैं। इनकी अवस्थिति के नाम बताएँ।

उत्तर-हिमनद घाटियों में निक्षेपणात्मक कार्य द्वारा निम्नलिखित रैखिक स्थलरूप निर्मित होते हैं(1) हिमोढ़, (2) एस्कर, (3) हिमानी धौत मैदान, (4) ड्रमलिन। उपर्युक्त सभी स्थलरूपों का निर्माण हिम के

पिघलने पर होता है; अतः ये सभी स्थलरूप हिम के साथ लाए गए मलबे द्वारा निर्मित हैं जो हिम के जल रूप में परिवहन हो जाने पर निक्षेपित मलबे द्वारा निर्मित होते हैं। इसलिए इनकी अवस्थिति उच्च अक्षांशों की अपेक्षा निम्न अक्षांशों पर अधिक होती है।

प्रश्न (v) मरुस्थली क्षेत्रों में पवन कैसे अपना कार्य करती है? क्या मरुस्थलों में यही एक कारक अपरदित स्थलरूपों का निर्माण करता है?

उत्तर-मरुस्थली क्षेत्रों में पवन अपना अपरदनात्मक कार्य अपवाहन एवं घर्षण द्वारा करती है। अपवाहन में पवन धरातल से चट्टानों के छोटे कण व धूल उठाती है। वायु की परिवहन प्रक्रिया में रेत एवं बजरी आदि औजारों की तरह धरातलीय चट्टानों पर चोट पहुँचाकर घर्षण करती है। इस प्रकार मरुस्थलों में पवन अपने इस अपरदनात्मक कार्य से कई रोचक स्थलरूपों का निर्माण करती है और जब पवन की गति अत्यन्त मन्द हो जाती है तथा उसके मार्ग में अवरोध उत्पन्न हो जाता है, निक्षेपण कार्य से स्थलरूपों को निर्मित करती है। मरुस्थलीय क्षेत्रों में पवन के अतिरिक्त प्रवाहित जल भी चादर बाढ़ (Sheet flood) द्वारा कुछ स्थलरूपों का निर्माण करता है।

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 150 शब्दों में दीजिए

प्रश्न (i) आर्द्र व शुष्क जलवायु प्रदेशों में प्रवाहित जल ही सबसे महत्त्वपूर्ण भू-आकृतिक कारक है। विस्तार से वर्णन करें।

उत्तर-प्रवाहित जल महत्त्वपूर्ण भू-आकृतिक अभिकर्ता है। इसका कार्य आर्द्र एवं शुष्क जलवायु प्रदेशों में विशेष रूप से प्रभावशाली रहता है। आर्द्र प्रदेशों में जहाँ अत्यधिक वर्षा होती है, प्रवाहित जल सबसे महत्त्वपूर्ण भू-आकृतिक कारक होता है जो धरातल के निम्नीकरण के लिए उत्तरदायी होता है। आर्द्र क्षेत्रों में प्रवाहित जल अधिक वर्षा के कारण चादर के रूप में प्रवाहित होता है, इसके अतिरिक्त वह निर्धारित नदी धारा के रूप में भी प्रवाहित होकर अपना अपरदन, परिवहन एवं निक्षेपण कार्य पूरा करता है। प्रवाहित जल अपरदन कार्य युवावस्था में अधिक तीव्रता में करता है इस अवस्था में नदी का जल तीव्र ढाल पर बहने के कारण जल प्रपात एवं छोटे झरनों का निर्माण करता है तथा नदी घाटी के विकास में संलग्न रहता है। प्रौढ़ावस्था में प्रवाहित जल निक्षेपण स्थलाकृतियों को जन्म देता है। नदी जल का कार्य उन क्षेत्रों में भी महत्त्वपूर्ण होता है जहाँ जलवायु अपेक्षाकृत शुष्क होती है। यहाँ धरातल पर प्रवाहित जल से रिल बनती है, उनसे अवनालिकाएँ तथा घाटियों का भी विकास होता है।

प्रश्न (ii) चूना-चट्टानें आर्द्र व शुष्क जलवायु में भिन्न व्यवहार करती हैं, क्यों? चूना प्रदेशों में प्रमुख व मुख्य भू-आकृतिक प्रक्रिया कौन-सी है और इसके क्या परिणाम हैं?

उत्तर-चूना-चट्टान वाले प्रदेशों में आर्द्र व शुष्क जलवायु के कारण भू-आकृतिक प्रक्रिया भिन्न होती है। चूना-चट्टान वाले आर्द्र जलवायु प्रदेशों में चट्टानों पर जल सरलता से स्रवण कर क्षैतिज रूप में प्रवाहित होने लगता है और रासायनिक घोलीकरण क्रिया से अपरदन कार्य प्रारम्भ हो जाता है। क्योंकि चूने के पत्थर में कैल्सियम कार्बोनेट प्रमुख अवयव होता है जो आर्द्र जलवायु में जल की उपलब्धता के कारण आसानी से घुल जाता है। जबकि शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में जल अल्पता के कारण चूने की चट्टानों के

अवयव आसानी से नहीं घुल पाते हैं। अतः चूना-चट्टानें आर्द्र व शुष्क जलवायु में भिन्न व्यवहार करती हैं। इसका मुख्य कारण चट्टानों का रासायनिक संघटन और जलवायु की भिन्नता है।।

चूना प्रदेशों में मुख्य भू-आकृतिक प्रक्रिया घोलीकरण के द्वारा चट्टानों को अपरदन और निक्षेपण है। इन क्षेत्रों में भूमिगत जल द्वारा चट्टानों के अवयव घोलीकरण से अन्यत्र स्थानों पर जमा होते रहते हैं जिससे कार्ट टोपोग्राफी का विकास होता है। इसके परिणामस्वरूप आकाशीय एवं पातालीय स्तम्भ स्थलरूपों का निर्माण होता है जबकि अपरदन के कारण सिन्कहोल डोलाइन, युवाला एवं कन्दराएँ आदि स्थलरूप निर्मित होते हैं (चित्र 7.1)।

प्रश्न (iii) हिमनद ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों को निम्न पहाड़ियों व मैदानों में कैसे परिवर्तित करते हैं या किस प्रक्रिया से यह कार्य सम्पन्न होता है बताएँ ।

उत्तर-पृथ्वी पर परत के रूप में हिम या पर्वतीय ढालों से घाटियों में रैखिक प्रवाह के रूप में प्रवाहित हिम को हिमनद कहते हैं। प्रवाहित जल के विपरीत हिमनद प्रवाह बहुत धीमी गति में सक्रिय रहता है। वास्तव में हिमनद गुरुत्वबल के कारण गतिमान होते हैं और प्रबल रूप से अपरदन कार्य करते हैं। जब एक बड़े क्षेत्र में भारी मात्रा में हिम एकत्र हो जाता है तो यह अपने भार और गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से पर्वतीय ढाल अथवा ढालों में धीमी गति से प्रवाहित होने लगता है। इस प्रवाह के दौरान हिम चट्टानों के साथ घर्षण एवं अपघटन/अपघर्षण प्रक्रिया से अपरदन का कार्य करता है जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के स्थलरूपों का निर्माण होता है। इनमें हिमगहवर (Cirque), शृंग (Horns) आदि मुख्य हैं (चित्र 7.2)।

हिम जब उच्च पर्वतों से निम्न पर्वतीय क्षेत्रों में प्रवाहित होता है तो तापमान वृद्धि के कारण वह पिघलना आरम्भ कर देता है। इस क्षेत्र में हिम ठोस रूप से तरल रूप में प्रवाहित होकर विभिन्न प्रकार के स्थलरूप; जैसे-हिमोढ़, एस्कर, डुमलिन आदि का निर्माण करता है (चित्र 7.3)।

वास्तव में, हिमनद ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों को अपरदन प्रक्रिया के द्वारा ही प्रारम्भ में निम्न पहाड़ियों के रूप में तथा पुनः पहाड़ियों को मैदानों के रूप में परिवर्तित कर देता है जिसमें ठोस हिम के साथ-साथ पिघलता हिम भी अपना विशेष सहयोग प्रदान करता है। अतः हिमनद ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों को निम्न पहाड़ियों व मैदानों में परिवर्तन को अपरदन कार्य के सहयोग से पूरा करता है।।

परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तर ||

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रश्न 1. मरुस्थलों में कोमल और कठोर शैलों के लम्बवत् एकान्तर क्रम से स्थित होने पर बनते हैं

(क) ज्यूगेन

(ख) जालीदार शैल

(ग) छत्रक शिला

(घ) यारडंग

उत्तर-(घ) यारडंग।

प्रश्न 2. अन्धी घाटियाँ अपरदन के किस कारक से उत्पन्न होती हैं?

(क) नदी से ।

(ख) हिमानी से

(ग) पवन से

(घ) भूमिगत जल से

उत्तर-(घ) भूमिगत जल से।

प्रश्न 3. निम्नलिखित में से कौन-सी आकृति वायु द्वारा बनती है? ।

(क) विसर्प ।

(ख) डुमलिन

(ग) बालुका-स्तूप

(घ) जलोढ़ पंख

उत्तर-(ग) बालुका-स्तूप।

प्रश्न 4. यारडंग का सम्बन्ध निम्नलिखित में से अपरदन के किस अभिकर्ता से है?

(क) भूमिगत जल

(ख) नदी

(ग) पवन

(घ) हिमानी

उत्तर-(ग) पवन।।

प्रश्न 5. निम्नलिखित में से कौन-सी आकृति नदी के कार्य द्वारा बनती है?

(क) हिमोढ़

(ख) चाप झील

(ग) अवकूट

(घ) इन्सेलबर्ग

उत्तर-(ख) चाप झील।

प्रश्न 6. अपक्षेप मैदान का सम्बन्ध निम्नलिखित में से अपरदन के किस अभिकर्ता से है?

(क) नदी

(ख) हिमानी ।

(ग) पवन

(घ) भूमिगत जल

उत्तर-(क) नदी।

प्रश्न 7. 'यू' -आकार की घाटी का सम्बन्ध निम्नलिखित में से अपरदन के किस अभिकर्ता से है?

(क) नदी ।

(ख) पवन

(ग) भूमिगत जल

(घ) हिमानी

उत्तर-(घ) हिमानी। ।

प्रश्न 8. "बालुका-स्तूप" का सम्बन्ध निम्नलिखित अपरदन अभिकर्ताओं में से किस अभिकर्ता से है?

(क) नदी

(ख) भूमिगत जल

(ग) हिमानी

(घ) पवन

उत्तर-(घ) पवन।

प्रश्न 9. निम्नलिखित स्थलाकृतियों में से कौन एक नदी के अपरदन कार्य से सम्बन्धित है?

(क) 'यू'-आकार की घाटी

(ख) वी'-आकार की घाटी ।

(ग) बरखान।

(घ) यारडंग

उत्तर-(ख) 'वी'-आकार की घाटी।

प्रश्न 10. निम्नलिखित में से कौन-सी स्थलाकृति हिमानी के अपरदन से बनी है?

(क) अंधी घाटी

(ख) हिमोढ़

(ग) तटबंध

(घ) लोयस

उत्तर-(ख) हिमोढ़।

प्रश्न 11. प्राकृतिक पुल अपरदनात्मक स्थलरूप है

(क) बहते जल का

(ख) भूमिगत जल का

(ग) हिमानी का ।

(घ) पवन का

उत्तर-(ख) भूमिगत जल का।

प्रश्न 12. निम्नलिखित में से कौन-सी स्थलाकृति नदी द्वारा निर्मित है?

- (ख) बरखान
- (ग) गोखुर झील
- (घ) कन्दरा

उत्तर-(ग) गोखुर झील।

प्रश्न 13. हिमोढ़ के निर्माण के लिए निम्नलिखित में से कौन अभिकर्ता उत्तरदायी है?

- (क) वायु ।
- (ख) नदी
- (ग) हिमानी
- (घ) भूमिगत जल

उत्तर-(ग) हिमानी।।

प्रश्न 14. 'बरखान का सम्बन्ध निम्नलिखित अपरदन अभिकर्ताओं में से किससे है?

- (क) भूमिगत जल
- (ख) पवन
- (ग) हिमानी
- (घ) नदी ।

उत्तर-(ख) पवन।

प्रश्न 15. निम्नलिखित में से किस स्थलरूप का निर्माण हिमानी द्वारा किया गया है?

- (क) बालुका स्तूप
- (ख) U-आकार की घाटी ।
- (ग) V-आकार की घाटी ।
- (घ) घोल रन्ध्र

उत्तर-(ख) U-आकार की घाटी।।

प्रश्न 16. निम्नलिखित स्थलाकृतियों में से कौन भूमिगत जल का अपरदनात्मक कार्य है?

- (क) कन्दरा स्तम्भ
- (ख) आश्चुताश्म
- (ग) निश्चुताश्म
- (घ) प्राकृतिक पुल

उत्तर-(घ) प्राकृतिक पुल।। ||

अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. टार्न क्या है? इसका निर्माण कैसे होता है?

उत्तर- नदी द्वारा निर्मित झील को टार्न कहते हैं। इसका निर्माण पर्वतीय क्षेत्रों में भूस्खलन की क्रिया द्वारा खिलाखण्डों से नदी का मार्ग अवरुद्ध हो जाने के फलस्वरूप होता है।

प्रश्न 2. इन्सेलबर्ग क्या है? ये कहाँ मिलते हैं?

उत्तर- वायु अपरदन द्वारा निर्मित गोलाकार पहाड़ियों को इन्सेलबर्ग कहते हैं। यह स्थलाकृति अल्जीरिया तथा नाइजीरिया (अफ्रीका) में अधिक मिलती है।

प्रश्न 3. अपरदन के कारकों का नामोल्लेख कीजिए।

उत्तर- 1. बहता हुआ जल (नदी), 2. हिमानी, 3. पवन, 4. सागरीय लहरें तथा 5. भूमिगत जल।

प्रश्न 4. नदी का अपरदन कितने प्रकार का होता है?

उत्तर- नदी का अपरदन दो प्रकार का होता है

1. लम्बवत् अपरदन-जिसमें नदी की तलहटी गहरी की जाती है।
2. पाश्विक अपरदन-जिसमें नदी के किनारे क्रमानुसार कट जाते हैं, इसी के द्वारा नदी टेढ़ा-मेढ़ा मार्ग बनाकर चलती है।

प्रश्न 5. बहते हुए जल (नदी) की अपरदन क्रिया से उत्पन्न दो स्थलाकृतियों के नाम लिखिए।

उत्तर- 1. जल-प्रपात तथा 2. 'वी'-आकार की घाटी।

प्रश्न 6. नदी के दो निक्षेपणात्मक आकारों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- 1. बाढ़ का मैदान तथा 2. डेल्टा।

प्रश्न 7. लटकती घाटी अपरदन के किस साधन से उत्पन्न होती है?

उत्तर- लटकती घाटी हिमानी द्वारा उत्पन्न होती है।

प्रश्न 8. हिमोढ़ अपरदन के किस कारक द्वारा निर्मित होते हैं?

उत्तर- हिमोढ़ हिमानी के निक्षेपणात्मक कारक से निर्मित होते हैं।

प्रश्न 9. कार्ट स्थलाकृतियाँ कहाँ पायी जाती हैं?

उत्तर- कार्ट स्थलाकृतियाँ चूना-पत्थर जैसी घुलनशील चट्टानों में पायी जाती हैं।

प्रश्न 10. बालुका-स्तूप कहाँ और कैसे बनते हैं?

उत्तर- बालुका-स्तूप मरुस्थलों में पवन की निक्षेप क्रिया से बनते हैं।

प्रश्न 11. कन्दरा स्तम्भ कैसे बनते हैं?

उत्तर- कन्दरा स्तम्भों का निर्माण घुलनशील शैलों के क्षेत्रों में भूमिगत जल की घुलन क्रिया तथा निक्षेपण के द्वारा होता है।

प्रश्न 12. नदी की जीर्णावस्था (वृद्धावस्था) में बनने वाली किसी एक आकृति का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- नदी की जीर्णावस्था (वृद्धावस्था) में बनने वाली प्रमुख आकृति डेल्टा है।

प्रश्न 13. गंगा-ब्रह्मपुत्र का डेल्टा किस प्रकार की डेल्टा है?

उत्तर-गंगा-ब्रह्मपुत्र का डेल्टा चापाकार डेल्टा है।

प्रश्न 14. पंजाकार डेल्टा का एक उदाहरण दीजिए।

उत्तर-मिसिसिपी डेल्टा।

प्रश्न 15. हिमानी द्वारा निर्मित मुख्य अपरदनात्मक स्थलाकृतियों के नाम बताइए।

उत्तर-हिमानी द्वारा निर्मित मुख्य अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ हैं—'यू' आकार की घाटी, लटकती घाटी, सर्क, हिमश्रृंग, पुच्छ तथा गिरिशृंग।

प्रश्न 16. वायु द्वारा निर्मित मुख्य अपरदनात्मक स्थलाकृतियों के नाम बताइए।

उत्तर-वायु द्वारा निर्मित मुख्य अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ हैं—वातगर्त, इन्सेलबर्ग, छत्रक, शिला, भूस्तम्भ, ज्यूगेन, यारडंग तथा ड्राइकान्टर।

प्रश्न 17. जलोढ़ पंख से क्या अभिप्राय है?

उत्तर-प्रौढ़ावस्था में नदी द्वारा निर्मित भू-आकृतियों में जलोढ़ पंख मुख्य आकृति है। पर्वतपदीय भागों में नदी बजरी, पत्थर, कंकड़, बालू, मिट्टी आदि पदार्थों का निक्षेपण शंकु के रूप में करती है। इनके बीच से अनेक छोटी-छोटी धाराएँ निकलती हैं। इस प्रकार के अनेक शंकु मिलकर पंखे जैसी आकृति का निर्माण करते हैं जिससे उन्हें जलोढ़ पंख का नाम दिया गया है।

प्रश्न 18. नदी की युवावस्था में बनने वाली दो आकृतियों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर-1. 'V' आकार की घाटी तथा 2. जल-प्रपात या झरना।

प्रश्न 19. नदी की प्रौढ़ावस्था में बनने वाली दो आकृतियों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर-1. जलोढ़ पंख तथा 2. नदी विसर्प।

प्रश्न 20. हिमानी के निक्षेपण कार्य से निर्मित दो भू-आकृतियों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर-1. हिमनद हिमोढ़ तथा 2. एस्कर।

प्रश्न 21. 'यू' आकार की घाटी की किन्हीं दो विशेषताओं को लिखिए।

उत्तर-1. इसका तल चौरस तथा गहरा होता है।

2. इसके किनारों का ढाल खड़ा होता है।

प्रश्न 22. बरखान का निर्माण किस क्रिया द्वारा होता है ?

उत्तर-बरखान का निर्माण पवन की निक्षेपणात्मक क्रिया द्वारा होता है।

प्रश्न 23. अन्धी घाटी किसे कहते हैं ?

उत्तर-जब धरातलीय नदियाँ घोल रन्ध्र, विलयन रन्ध्र आदि छिद्रों से प्रवेश करती हैं तो आगे चलकर अचानक ही इनका जल समाप्त हो जाता है। इन्हें ही अन्धी घाटियाँ कहते हैं।

प्रश्न 24. हिमरेखा क्या होती है?

उत्तर-हिमरेखा वह काल्पनिक रेखा है जिससे ऊपर आर्द्रता सदैव हिम के रूप में पाई जाती है।

प्रश्न 25. पाश्चिक हिमोढों का आधिक्य कहाँ मिलता है?

उत्तर-पाश्चिक हिमोढों का आधिक्य ग्रीनलैण्ड एवं अलास्का में अधिक मिलता है। यहाँ इनकी ऊँचाई 300 मीटर तक होती है।

प्रश्न 26. हिमानी जलोढ निक्षेप द्वारा कौन-कौन-सी स्थलाकृतियाँ बनती हैं?

उत्तर-हिमानी जलोढ निक्षेप द्वारा एस्कर, केम तथा हिमनद अपक्षेप मैदान आदि स्थलाकृतियाँ बनती हैं।

प्रश्न 27. हिमनद कटक (एस्कर) क्या व कैसे बनते हैं?

उत्तर-हिमानी निक्षेप से बने लम्बे किन्तु कम ऊँचाई वाले टेढ़े-मेढ़े कटक हिमानी कटक कहलाते हैं। देखने पर ये कटक प्राकृतिक बाँध जैसे प्रतीत होते हैं। ये बालू, मिट्टी और गोलाश्म से निर्मित होते हैं। इन पदार्थों का निक्षेपण हिमानी के अन्दर बहने वाली जल-धाराओं द्वारा लाए गए अवसाद से होता है।

प्रश्न 28. डेल्टा और एस्चुअरी में अन्तर बताइए।

उत्तर-डेल्टा-त्रिभुजाकार होता है जो नदी मुहाने पर निक्षेपण की क्रिया से बनता है। एस्चुअरी-‘वी’ (V) आकृति में किसी नदी का ज्वारीय मुहाना है।

प्रश्न 29. घोल रन्ध्र (स्वालो होल्स) से सम्बन्धित स्थलाकृतियों के नाम लिखिए।

उत्तर-घोल रन्ध्र से सम्बन्धित स्थलाकृतियों में विलयन रन्ध्र, डोलाइन, घोलपटल, ध्वस्त रन्ध्र, कार्ट खिड़की, कार्ट झील, युवाला, पोलिज आदि प्रमुख हैं।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. नदी की प्रौढावस्था का विवरण दीजिए।

उत्तर-यह नदी की मैदानी अवस्था होती है। युवावस्था के बाद जैसे ही नदी पर्वत प्रदेश से मैदानों में प्रवेश करती है, उसका वेग एकदम मन्द हो जाता है। इस अवस्था में नदी में सहायक नदियों के मिलने से जल की मात्रा तो बढ़ जाती है परन्तु जल में तेज गति न होने के कारण उसकी वहन शक्ति क्षीण हो जाती है। अतः पर्वतीय क्षेत्रों से लाए गए अवसाद तथा शिलाखण्डों को नदी पर्वतपदीय क्षेत्रों में ही जमा कर देती है, जिसे पर्वतपदीय मैदान कहते हैं। गंगा नदी ऋषिकेश एवं हरिद्वार के निकट ऐसे ही अवसादों का निक्षेप करती है। इस अवस्था में नदी गहरे कटाव की अपेक्षा पाश्चिक अपरदन (Lateral Erosion) अधिक करती है। कभी-कभी नदी का एक किनारा खड़े ढाल वाला तथा दूसरा प्रायः समतल होता है। ऐसी दशा में नदी खड़े किनारे की ओर अपरदन तथा समतल किनारे की ओर निक्षेपण का कार्य करती है। इस अवस्था में नदी अपनी घाटी को चौड़ा करने का कार्य ही अधिक करती है।

प्रश्न 2. नदी के निक्षेपणात्मक कार्य का विवरण दीजिए।

उत्तर-समतल मैदानी क्षेत्रों में प्रवाहित होने वाली नदी में वेग की कमी के कारण भारी पदार्थों को बहाकर ले जाने की क्षमता कम रह जाती है; अतः नदी उन पदार्थों का अपनी तली एवं किनारों पर निक्षेप करने लगती है। बाढ़ के मैदानों एवं डेल्टाओं का निर्माण इसी निक्षेपण क्रिया का परिणाम है। पर्वतीय क्षेत्रों से जैसे ही नदी मैदानों में प्रवेश करती है, भारी-भारी शिलाखण्डों को वहीं पर्वतीय प्रदेशों में छोड़ देती है जो

पर्वतपदीय मैदान कहलाता है। मैदानी क्षेत्रों में हल्के पदार्थों का ही निक्षेप हो पाता है, जबकि डेल्टाई क्षेत्रों तक बारीक मिट्टी एवं बालू के महीन कण ही पहुँच पाते हैं। सागर अथवा महासंगार में मिलने से पहले नदी अपने डेल्टा का निर्माण निक्षेपण कार्य द्वारा ही करती है।

प्रश्न 3. नदी के परिवहन सम्बन्धी कार्य को समझाइए।

उत्तर-नदियों का दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य शैलचूर्ण या मलबे का स्थानान्तरण है। यह स्थानान्तरण नदी की घाटी में उसके उद्गम से मुहाने तक कहीं भी हो सकता है। यही स्थानान्तरण नदी का परिवहन कार्य कहलाता है। प्रत्येक नदी में परिवहन की एक सीमा होती है। इस सीमा से अधिक जलोढ़क होने पर नदी उसका परिवहन नहीं कर पाती है। वस्तुतः नदी के वेग, जल की मात्रा, प्रवणता आदि कारकों से नदी को जो शक्ति प्राप्त होती है उसमें घर्षण तथा अपरदन के पश्चात् जो शक्ति बचती है उससे परिवहन करती है। इससे निम्नांकित सूत्र द्वारा व्यक्त किया जा सकता है

परिवहन = नदी की कुल शक्ति – घर्षण में नष्ट शक्ति – अपरदन में नष्ट शक्ति

गिलबर्ट के अनुसार नदी की परिवहन शक्ति उसके वेग में छठे घात के तुल्य होती है अर्थात् यदि नदी का वेग दुगुना हो जाए तो उसकी परिवहन शक्ति 64 गुना बढ़ जाती है।

प्रश्न 4. नदी के अपरदनात्मक कार्य से उत्पन्न दो स्थलाकृतियों की विवेचना कीजिए।

उत्तर-नदी की युवावस्था में अपरदन द्वारा उत्पन्न दो स्थलाकृतियाँ निम्नलिखित हैं

1. V' आकार की घाटी-पर्वतीय क्षेत्र में नदी को निम्न कटाव अधिक सक्रिय होने के कारण वह अंग्रेजी के अक्षर V-आकार की घाटी का निर्माण करती है। कुछ नदियाँ लगातार अपनी घाटी के तल को गहरा करती जाती हैं। इस गहरी V-आकार की घाटी को कन्दरा (Gorge) कहते हैं। कन्दरा का निर्माण वहाँ होता है जहाँ कठोर शैलें पाई जाती हैं। कन्दरा का विस्तृत रूप कैनियन (Canyon) कहलाता है।

2. जल-प्रपात-पर्वतीय क्षेत्रों में नदी द्वारा निर्मित जल-प्रपात एक प्रमुख स्थलाकृति है। जब नदी ऊँची पर्वत-श्रेणियों से नीचे की ओर प्रवाहित होती है, तो धरातलीय ढाल की असमानता के कारण मार्ग में अनेक जल-प्रपात या झरने बनाती है, परन्तु यदि उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में नदी के प्रवाह-मार्ग में कोमल एवं कठोर चट्टानों एक साथ आ जाएँ तो जल कोमल चट्टानों का आसानी से अपनदन कर देता है जबकि कठोर चट्टानों को अपरदन करने में वह सफल नहीं हो पाता। इस प्रकार प्रवाहित जल अकस्मात् ऊँचाई से नीचे की ओर गिरने लगता है जिसे जल प्रपात या झरना कहते हैं।

प्रश्न 5. नदी के निक्षेपण कार्य द्वारा निर्मित डेल्टा के मुख्य प्रकार बतलाइए।

उत्तर-संरचना एवं आकार के आधार पर डेल्टा तीन प्रकार के होते हैं

1. चापाकार डेल्टा-जब नदी की जलवितरिकाएँ मोटे जलोढ़ का निक्षेप इस प्रकार करती हैं कि बीच की मुख्य धारा आगे बढ़कर अधिक निक्षेप करती है तो चापाकार डेल्टा का निर्माण होता है। सिन्धु, हवांगहो गंगा, पो, राइन आदि नदियों के डेल्टा चापाकार डेल्टा के प्रमुख उदाहरण हैं।

2. पंजाकार डेल्टा-सागर में मिलने से पूर्व नदी की धारा अनेक उपशाखाओं में बँट जाती है। प्रत्येक शाखा के पार्श्वो पर महीन अवसाद का निक्षेप हो जाता है। यह निक्षेप पक्षियों के पंजे की भाँति दिखलाई पड़ता है, जिससे इसे पंजाकार डेल्टा कहा जाता है। मिसिसिपी नदी का डेल्टा इसका उत्तम उदाहरण है।

3. ज्वारनदमुख डेल्टा-इस प्रकार के डेल्टा का निर्माण नदियों के पूर्वनिर्मित मुहानों पर होता है। कभी-कभी नदी, धारा की तीव्र गति के कारण अवसादों को बहा ले जाती है। दूसरी ओर ज्वार-भाटा भी निक्षेप किए हुए मलबे को बहाकर सागर में ले जाता है; अतः पूर्ण डेल्टा नहीं बन पाता। ऐसे डेल्टाओं को ज्वारनदमुख डेल्टा कहते हैं। राइन नदी का डेल्टा इसका प्रमुख उदाहरण है।

प्रश्न 6. लम्बवत् एवं अनुप्रस्थ बालू के स्तूप कहाँ व कैसे बनते हैं?

उत्तर-1. लम्बवत् बालू के टीले-इन टीलों का आकार वायु की दिशा में, लम्बवत् होता है। ये लम्बे तथा समान आकार वाले होते हैं जो निरन्तर वायु की दिशा में आगे की ओर खिसकते रहते हैं। इनकी ऊँचाई 230 मीटर तक होती है। भारत के समुद्रतटीय क्षेत्रों में शक्तिशाली मानसूनी पवनों द्वारा लम्बवत् टीले ही अधिक निर्मित होते हैं। अफ्रीका के सहारा मरुस्थल में ऐसे टीले बहुत अधिक संख्या में पाए जाते हैं।

2. अनुप्रस्थ बालू के स्तूप-जब मन्द गति से प्रवाहित होने वाली वायु के मार्ग में बाधा उत्पन्न होती है तो छोटे तथा असमान आकार के टीलों का निर्माण होता जाता है। इनका विस्तार पवन की दिशा के अनुप्रस्थ रूप में होता है। इन टीलों का आकार भी विषम होता है। इन स्तूपों का ढाल वायु की दिशा की ओर मन्द तथा विपरीत दिशा की ओर तीव्र रहता है। वायु की विपरीत दिशा की ओर बालू का जमाव न होने के कारण ये खोखले हो जाते हैं।

प्रश्न 7. भूमिगत जल की निक्षेपण क्रिया द्वारा निर्मित दो स्थलरूपों का वर्णन कीजिए।

उत्तर-भूमिगत जल की निक्षेपण क्रिया द्वारा निर्मित दो स्थलरूप निम्नलिखित हैं

1. आश्चुताश्म-भूमिगत जल द्वारा निर्मित कन्दराओं के जल में वर्षाजल के कारण कार्बन डाइ-ऑक्साइड गैस मिली होने से कार्बोनिक अम्ल तैयार हो जाता है। यह अम्ल चूने की चट्टानों पर रासायनिक क्रिया करता है। इस प्रकार खनिजयुक्त जल बूंद-बूंद कर गुफाओं की छत से नीचे टपकता रहता है। छत से लटके चूने के इस स्तम्भ को आश्चुताश्म कहा जाता है।

2. कन्दरा स्तम्भ-कन्दरा की छत से टपकने वाले घोल द्वारा कन्दरा की छत एवं फर्श पर क्रमशः निर्मित आश्चुताश्म एवं निश्चुताश्म के परस्पर मिल जाने से स्तम्भ की रचना होती है, जिसे कन्दरा स्तम्भ या चूने का स्तम्भ (Limestone Pillars) कहा जाता है। कभी-कभी कन्दरा की छत से रिसने वाला पदार्थ कन्दरा के फर्श से जा मिलता है अथवा कन्दरा की छत से टपकने वाला पदार्थ फर्श से ऊपर की ओर बढ़ता हुआ छत से मिल जाता है। अतः इन दोनों अवस्थाओं में कन्दरा स्तम्भ की रचना हो जाती है।

प्रश्न 8. हिमोढ़ कैसे बनते हैं? ये कितने प्रकार के होते हैं?

या हिमानी द्वारा निर्मित हिमोढ़ों को एक आरेख द्वारा प्रदर्शित कीजिए।

उत्तर-हिमनद अपने साथ शिलाखण्ड, कंकड़, पत्थर, बालू एवं मिट्टी के अवसाद को बहाकर लाता है। ये पदार्थ हिमानी के अपरदन कार्य में सहायता करते हैं। जब यह हिम पिघल जाती है तब जल धाराओं के रूप में बहकर आगे की ओर निकल जाता है, परन्तु अवसाद वहीं एकत्र हो जाती है अर्थात् यह अवसाद हिमानी के मार्ग तथा किनारों पर जम जाती है। इस एकत्रित अवसाद के हिम के साथ प्रवाहित होने की प्रक्रिया को हिमोढ़ या मोरेन (Moraines) कहते हैं। हिमानी द्वारा किये गये निक्षेपण विभिन्न प्रकार के होते हैं। हिमोढ़ में बालू, मिट्टी, कंकड़, पत्थर से लेकर विशाल शिलाखण्ड तक होते हैं। जब हिमानी समाप्त होती है तो वह घाटी के विभिन्न स्थानों पर हिमोढ़ों का निर्माण करती है। अतः स्थिति के अनुसार हिमोढ़ को निम्नलिखित भागों में विभाजित कर सकते हैं

1. पार्श्विक हिमोढ़ (Lateral Moraines)-हिमानी के दोनों पार्श्वों के सहारे एक सीधी रेखा में निक्षेपित मलबा जो शिलाखण्ड, बालू, मिट्टी तथा पत्थरों के अर्द्ध-चन्द्राकार ढेर के रूप में होता है, पार्श्विक हिमोढ़ कहलाता है। ऐसे हिमोढ़ों का आधिक्य ग्रीनलैण्ड एवं अलास्का में अधिक पाया जाता है। अलास्का में कई स्थानों पर हिमोढ़ की ऊँचाई 1000 फुट तक देखी गयी है, परन्तु इनकी सामान्य ऊँचाई 100 फुट तक ही पायी जाती है।

2. मध्यस्थ हिमोढ़ (Medial Moraines)-दो हिमनदों के मिलन-स्थल पर उनके पार्श्व परस्पर जुड़ जाते हैं। इस प्रकार उनके मध्य में जमे हुए अवसाद को मध्यस्थ हिमोढ़ की संज्ञा दी जाती है। अतः दोनों हिमानियों के मध्य में कंकड़-पत्थरों की श्रृंखला के रूप में स्थित अवसाद को मध्यस्थ हिमोढ़ कहा जाता है।

3. तलस्थ हिमोढ़ (Ground Moraines)-हिमानी अपनी तली के द्वारा पर्याप्त अवसाद ढोती है। हिम के पिघलने पर यह अवसाद घाटी की तली में चारों ओर बिखरा रह जाता है, जिसे तलस्थ हिमोढ़ के नाम से पुकारा जाता है। दक्षिणी कनाडा में इस प्रकार की हिमानियाँ तथा हिमोढ़ अधिक पाये जाते हैं। तलस्थ हिमोढ़ के क्षेत्रों में झीलें एवं दलदल बहुत मिलती हैं।

4. अन्तिम हिमोढ़ (Terminal Moraines)-हिमनद की अन्तिम सीमा जब पिघलने लगती है तो हिमनद द्वारा लाया गया बहुत-सा पदार्थ वहाँ अर्द्ध-चन्द्राकार रूप में एकत्रित होने लगता है। इस जमाव को अन्तिम हिमोढ़ कहते हैं। इन हिमोढ़ों को निक्षेप प्रायः श्रेणियों के रूप में होता है तथा इनका आकार भी अर्द्ध-चन्द्राकार रूप में होता है।

प्रश्न 9. बरखान या अर्द्ध-चन्द्राकार बालू के टीलों का निर्माण किस प्रकार होता है? ।

उत्तर-बरखान या अर्द्ध-चन्द्राकार बालू के टीकों (Parabolic Sand-dunes) की आकृति अर्द्ध-चन्द्राकार होती है, इसलिए इन्हें बरखान या चापाकार टीलों की नाम से भी पुकारा जाता है। इन टीलों का निर्माण तीव्रगामी पवन के मार्ग में अचानक बाधा उपस्थित हो जाने के फलस्वरूप होता है। इनकी भुजाएँ

लम्बाई में पवन की दिशा की ओर फैली हुई होती हैं। इन टीलों का वायु की दिशा की ओर का ढाल उत्तल अर्थात् मन्द तथा विपरीत दिशी का ढाल अवतल अर्थात् तीव्र होता है। जहाँ वायु सभी दिशाओं से चलती है, वहाँ इनका आकार गोलाकार हो जाता है। ये टीले समूह में पाए जाते हैं। अफ्रीका के सहारा मरुस्थल में अर्द्ध-चन्द्राकार बालू की टीलों की प्रधानता मिलती है।

प्रश्न 10. वायु के कार्य बतलाइए तथा अपरदन कार्य की प्रक्रिया समझाइए।

उत्तर-वायु के कार्य

अन्य कारकों की भाँति वायु के कार्यों को भी तीन भागों में बाँटा जा सकता है

1. वायु का अपरदनात्मक कार्य (Erosional Work of Wind),
2. वायु का परिवहनात्मक कार्य (Transportational Work of Wind) तथा |
3. वायु को निक्षेपणात्मक कार्य (Depositional work of wind)

वायु का अपरदनात्मक कार्य

वायु का अपरदनात्मक कार्य अपवाहन (Deflation) और अपघर्षण (Abrasion) की क्रिया द्वारा सम्पन्न होता है। अपवाहन अर्थात् उड़ाकर ले जाने की क्रिया द्वारा वायु मरुस्थलों में उथले बेसिन बना देती है जिन्हें वात गर्त कहते हैं। जब इन वात गर्तों में वायु द्वारा अपरदित बालू का उठान जल-स्तर तक पहुँच जाता है तो मरुद्यान (Oasis) निर्मित हो जाते हैं। तीव्र वायु अपने साथ कंकड़-पत्थर, शिलाखण्ड एवं बालू लेकर शैलों पर तीव्र प्रहार करती है तथा शैलों को रेगमाल की भाँति खरोँच देती है। इस प्रकार वायु भौतिक अपरदन का कार्य अधिक करती है। अपघर्षण का सबसे अधिक प्रभाव ऊँची उठी हुई शैलों पर पड़ता है। वायु के साथ उड़कर चलने वाले पदार्थ परस्पर भी खण्डित होते रहते हैं, जिसे सन्निघर्षण की क्रिया कहते हैं। इसके अतिरिक्त ये बालू के कण मार्ग में पड़ने वाली शैलों को अपने प्रहार से घिसते हैं तो उस क्रिया को अपघर्षण कहा जाता है।

प्रश्न 11. मरुस्थलों में झील कैसे बनती है? वाजदा और प्लाया को समझाइए।

उत्तर-मरुस्थलों में मैदानों की स्थिति महत्त्वपूर्ण होती है। पर्वतों में स्थित द्रोणी की ओर से जब जल आता है तो कुछ समय में यह मैदान जल से भर जाता है और उथली झील का निर्माण हो जाता है। इस उथली झील को प्लाया (Playas) कहते हैं। इसमें जल थोड़े समय के लिए ही रहता है, क्योंकि मरुस्थलों में वाष्पीकरण की तीव्रता के कारण जल शीघ्र सूख जाता है। जब प्लाया को जल सूख जाता है तो यह सूखी झील प्लाया मैदान कहलाती है। यदि इस प्लाया मैदान का ढाल पर्वतीय क्षेत्रों में $1-5^\circ$ होता है तो इसे वाजदा कहते हैं।

प्रश्न 12. रोधिकाएँ क्या हैं? इनसे सम्बन्धित स्थलरूप बताइए।

उत्तर-रोधिकाएँ जलमग्न आकृतियाँ हैं। जब यही रोधिकाएँ जल के ऊपर दिखाई देती हैं तो इनको रोध (Barriers) कहा जाता है। ऐसी रोधिकाएँ जिनका एक भाग खाड़ी के शीर्ष स्थल से जुड़ा हो तो उसे स्पिट

(Spit) कहा जाता है जब रोधिका तथा स्पिट किसी खाड़ी के मुख पर निर्मित होकर इसके मार्ग को अवरुद्ध कर देते हैं तब लैगून (Lagoon) का निर्माण होता है। कालान्तर में जब यहीं लैगून स्थल से आए तलछट द्वारा भर जाती है तो तटीय मैदान का निर्माण होता है।

प्रश्न 13. समुद्र तट पर बनी अपतटीय रोधिकाओं का सुनामी आपदा को रोकने में क्या मध है?

उत्तर-समुद्र तट पर बनी रोधिकाएँ अपतटीय रोधिका कहलाती हैं। वास्तव में ये प्राकृतिक स्थलाकृति सुनामी आपदा के समय महत्वपूर्ण रक्षाकवच सिद्ध होती हैं। इन रोधिकाओं के कारण सुनामी के समय सागर का जल तट से टकराकर वापस समुद्र की ओर चला जाता है। इसलिए अपतट रोधिकाएँ सुनामी के समय सागरीय जल को तट से बाहर जाने से रोकने में विशेष सहयोग प्रदान करती हैं। अपतट रोधिकाओं के अतिरिक्त सागर तट पर स्थित रोध, पुलिन तथा पुलिन स्तूप आदि ऐसी ही स्थलाकृतियाँ हैं जो सुनामी की प्रबलता को कम करती हैं। इसलिए सागरीय स्थलाकृतियों को संरक्षण प्रदान करना चाहिए क्योंकि ये मानवीय बस्तियों को सागरीय तूफान से सुरक्षा प्रदान करती हैं।

प्रश्न 14. जलोढ़ पंख एवं जलोढ़ शंकु और रॉक बेसिन तथा टार्न में अन्तर बताइए।

उत्तर-1. जलोढ़ पंख एवं जलोढ़ शंकु-मैदानी क्षेत्रों में धरातलीय ढाल कम होने के कारण नदी का वेग बहुत मन्द हो जाता है अतः उसकी परिवहन क्षमता भी बहुत ही कम रह जाती है। नदी अवसाद को अपने साथ पर्वतीय क्षेत्रों से बहाकर लाती है तथा उन्हें आगे ले जाने में असमर्थ रहने के कारण उनका निक्षेप वहीं पर्वतपदीय क्षेत्रों में कर देती है। इस क्षेत्र में नदी बजरी, मिट्टी, बालू, कंकड़ और काँप मिट्टी का जमाव अर्द्ध-चन्द्राकार रूप में करती है, जिसे जलोढ़ पंख कहते हैं। इसमें महीन कणों का निक्षेपण किनारे पर दूर-दूर तथा मोटे कणों का निक्षेपण पास-पास होता है। जब पर्वतीय नदी अपेक्षाकृत ऊँचे भाग से मैदान में उतरती है तो जलोढ़ पंख निर्मित होते हैं किन्तु क्रमशः निक्षेपण द्वारा इनकी ऊँचाई बढ़ती जाती है जिससे शंकवाकार आकृति का निर्माण होता है। यही आकृति जलोढ़ शंकु कहलाती है।

2. रॉक बेसिन तथा टार्न-यह हिमनद द्वारा बनी स्थलाकृति है। वास्तव में सर्क की तली (Basin) में हिमनद के अत्यधिक दबाव तथा अपरदन से कालान्तर में एक गड्ढे का निर्माण होता है, जिसे रॉक बेसिन कहते हैं। जब तापमान अधिक होने पर हिम पिघल जाता है तो रॉक बेसिन में जल भरा रह जाता है। इस प्रकार एक झील का निर्माण होता है, जिसे टार्न कहते हैं।

प्रश्न 15, बाढ़ के मैदान एवं प्राकृतिक तटबन्ध किस प्रकार निर्मित होते हैं?

उत्तर-बाढ़ के मैदान-मैदानी भागों में नदी की वहन शक्ति बहुत ही कम हो जाती है। अतः वह अपनी तली में अवसाद जमा करती है, जिससे नदी का जल दोनों किनारों की ओर दूर-दूर तक फैल जाता है। ऐसी स्थिति में क्षमता से अधिक जल हो जाने पर नदी में बाढ़ आ जाती है। बाढ़ समाप्त हो जाने पर नदी का जल उस प्रदेश में बालू एवं काँप मिट्टी का एक विशाल निक्षेप छोड़ जाता है। इस प्रकार बार-बार बाढ़ आने से लहरदार समतल काँप के मैदान बन जाते हैं, जिन्हें बाढ़ के मैदानों के नाम से पुकारा जाता है।

प्राकृतिक तटबन्ध-जिस समय नदी में बाढ़ आती है वह अपने किनारों पर बालू, बजरी तथा मिट्टी आदि अवसाद का निक्षेप कर देती है। इस प्रकार किनारों पर नदी के समानान्तर दोनों ओर ऊँचे-ऊँचे बाँध से बन

जाते हैं, जिन्हें प्राकृतिक तटबन्ध कहते हैं। ये प्राकृतिक तटबन्ध नदी के जल को नदी के किनारों के बाहर फैलने से रोकते हैं।

प्रश्न 16. गोखुर झील या धनुषाकार झील किस प्रकार निर्मित होती है?

उत्तर-गोखुर (धनुषाकार) झील-मैदानी भागों में नदियों का वेग मन्द हो जाता है तथा प्रवाह के लिए नदियाँ ढालू मार्ग कोमल चट्टानों को खोजती रहती हैं। इसी स्वभाव के कारण नदी की धारा में जगह-जगह घुमाव या मोड़ पड़ जाते हैं, जिन्हें विसर्प या नदी मोड़ कहते हैं। प्रारम्भ में नदी द्वारा निर्मित मोड़ छोटे-छोटे होते हैं परन्तु धीरे-धीरे इनका आकार बढ़कर घुमावदार होता जाता है। जब ये विसर्प बहुत विशाल और घुमावदार हो जाते हैं, तब बाढ़ के समय नदी का तेजी से बहता हुआ जल घूमकर बहने के स्थान पर सीधे ही मोड़ की संकरी ग्रीवा को काटकर प्रवाहित होने लगता है तथा नदी को मोड़ मुख्य धारा से कटकर अलग हो जाता है। इस प्रकार उस पृथक् हुए मोड़ से एक झील का निर्माण होता है। इस झील की आकृति धनुष के आकार या गाय के खुर जैसी होती है इसलिए नदी मोड़ एवं जलधारा की तीव्र गति से बनी यह झील गोखुर झील या धनुषाकार झील कहलाती है।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. नदी अथवा बहते हुए जल के अपरदन कार्य का उसकी विभिन्न अवस्थाओं में वर्णन कीजिए।

या निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए

(अ) V” आकार की घाटी

(ब) जल-प्रपात

(स) गोखुर झील

(द) डेल्टा

या नदी के अपरदन कार्य द्वारा निर्मित भू-आकृतियों का वर्णन कीजिए। इन आकृतियों का मानव के लिए क्या महत्त्व है?

या नदी के अपरदन तथा निक्षेप द्वारा निर्मित किन्हीं पाँच भू-आकृतियों की विवेचना कीजिए।

या डेल्टा का निर्माण किस प्रकार होता है?

या नदी द्वारा निर्मित दो अपरदनात्मक स्थलरूपों का वर्णन कीजिए।

या छाड़न या गोखुर झील क्या है?

उत्तर-धरातल पर अपरदन के बाह्य कारकों में नदियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। नदियों का जल ढाल की ओर प्रवाहित होता है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि नदियाँ प्रतिवर्ष समुद्रों में लगभग 27,460 घन किमी जलराशि बहाकर लाती हैं। नदियों में जल की आपूर्ति हिमानियों एवं वर्षा से होती है। इस प्रकार “स्वाभाविक एवं गम्भीर रूप से धरातल पर बहने वाला जल नदी कहलाता है।” धरातल पर जितनी भी जलधाराएँ हैं, वे सभी स्वतन्त्र रूप से बहती हुई मिल जाती हैं। इस प्रकार नदियों का यह अपवाह-क्षेत्र उन सभी नदियों का कार्य-क्षेत्र होता है, जिसे नदी-बेसिन के नाम से पुकारते हैं।

नदी अथवा प्रवाहित जल के कार्य

नदी, अपरदन का एक शक्तिशाली कारक है। नदियाँ अपघर्षण तथा सन्निघर्षण द्वारा अपनी घाटियों को काट-छाँट कर चौड़ा करती जाती हैं तथा मलबे को प्रवाहित कर अन्यत्र स्थान पर जमा कर देती हैं। इनके फलस्वरूप धरातल पर विभिन्न स्थलाकृतियों का निर्माण होता है। जिनका विवरण निम्नवत् है

1. नदी का अपरदनात्मक कार्य (Erosional Work of River)-नदी द्वारा अपरदन कार्य दो रूपों में सम्पन्न होता है-(अ) रासायनिक एवं (ब) भौतिक या यान्त्रिक अपरदन। रासायनिक अपरदन में नदी-जल घुलनशील तत्वों द्वारा चट्टानों को अपने में घुलाकर काटता रहता है, जबकि यान्त्रिक अपरदन में नदी-तल या किनारों का अपरदन अपरदनात्मक तत्वों से होता रहता है। नदियाँ द्वारा अपरदन की इस क्रिया में पाश्विक अपरदन तथा लम्बवत् अपरदन होता है। इस प्रकार नदी द्वारा अपरदन कार्य बड़ा ही व्यापक है। उद्गम से लेकर मुहाने तक नदी के कार्यों को तीन भागों में विभाजित किया जाता है-

- पर्वतीय भाग या युवावस्था,
- मैदानी भाग या प्रौढ़ावस्था तथा
- डेल्टाई भाग या वृद्धावस्था।

2. नदी का परिवहन कार्य (Transportational Work of River)-नदी का परिवहन कार्य भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। नदी के जल के साथ बहने वाले शिलाखण्ड आपस में टकराकर चलते रहते हैं तथा नदी-तल को भी कुरेदते हुए प्रवाहित होते हैं। इससे इनका आकार छोटा होता जाता है। इस प्रकार नदियाँ कंकड़, पत्थर, बजरी, रेत, मिट्टी आदि भारी मात्रा में जमा करती जाती हैं। नदियाँ जब मैदानी भागों में प्रवेश करती हैं तो उनके वेग एवं तीव्रता में कमी आ जाती है। इससे नदियाँ अपनी तली तथा किनारों पर निक्षेप करते हुए प्रवाहित होती हैं। इसीलिए पर्वतपदीय क्षेत्रों में बड़े-बड़े शिलाखण्ड पाये जाते हैं। नदी द्वारा परिवहन करने की क्षमता जल की मात्रा एवं उसकी गति पर निर्भर करती है।

3. नदी का निक्षेपणात्मक कार्य (Depositional work of River)-नदी की जलधारा अपरदित पदार्थों को प्रवाहित करती हुई मार्ग में जहाँ कहीं भी जमाव कर देती है, वह निक्षेपण कहलाता है। निक्षेपण अपरदन क्रिया का प्रतिफल होता है। इस जमाव में बालू, मिट्टी, कंकड़, पथरी, बजरी आदि सभी छोटे-बड़े पदार्थ होते हैं जो नदियाँ द्वारा झीलों, सागरों अथवा महासागरों तक ले जाये जाते हैं। जैसे ही नदियाँ मैदानी क्षेत्रों में प्रवेश करती हैं, उनमें भारी पदार्थों को वहन करने की क्षमता नहीं रह पाती। इसी कारण अनुकूल दशा मिलते ही नदियाँ अपनी तली एवं पार्श्वो पर अवसाद का निक्षेप करने लगती हैं। भारी पदार्थों को नदियाँ पर्वतीय क्षेत्रों में वहन करती हैं तथा उसका निक्षेप पर्वतपदीय क्षेत्रों में करती हैं। मैदानी क्षेत्रों में हल्के पदार्थों का ही निक्षेप हो पाता है। जलाशयों में मिलने से पहले नदियाँ विस्तृत डेल्टाओं का निर्माण करती हैं, क्योंकि यहाँ तक बारीक मिट्टी तथा बालू ही पहुँच पाती है। डेल्टाई क्षेत्रों में नदियों का प्रवाह मार्ग समुद्र तल के लगभग समानान्तर हो जाता है; अतः यहाँ जल चारों ओर फैल जाता है।

निक्षेपण की क्रिया में विभिन्न भू-आकृतियों की रचना होती है। जलोढ़ पंख, विसर्पण, छाड़न झील, तट-बाँध, वेदिका, बाढ़ के मैदान एवं नदी की चौड़ी घाटी प्रमुख भू-आकृतियाँ हैं।

नदी की अवस्थाएँ

नदियाँ अपने अपरदन, परिवहन एवं निक्षेपण का कार्य अपनी विभिन्न अवस्थाओं के अन्तर्गत सम्पादित करती हैं। बहता हुआ जल अथवा नदी अपने उद्गम स्थल (पर्वतीय क्षेत्र) से लेकर अपने संगम स्थल (मुहाना) तक तीन अवस्थाओं से गुजरती है तथा अनेक स्थलाकृतियों का निर्माण करती है, जिसका विवरण निम्नलिखित है—

1. युवावस्था (Youthful Stage)-पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षा तथा हिमानी के पिघलने से छोटी-छोटी जलधाराओं का जन्म होता है। इस समय नदियों में जल की मात्रा कम तथा ढाल तीव्र होने के कारण वेग अधिक होता है। इस प्रकार युवावस्था में नदियाँ ऊबड़-खाबड़ पर्वतीय क्षेत्र में प्रवाहित होती हैं। पर्वतीय भागों में मुख्य नदी धीरे-धीरे अपनी घाटी को गहरा करना प्रारम्भ कर देती है तथा इसमें अनेक सहायक नदियाँ आकर मिलने लगती हैं। इस अवस्था में नदियाँ अपने तल का अधिक कटाव करती हैं जिससे गॉर्ज, कन्दरा, जल-प्रपात, जल-गर्तिकाएँ, कुण्ड आदि स्थलाकृतियों का निर्माण होता है। युवावस्था में नदी निम्नलिखित भू-आकृतियाँ बनाती है

(i) **‘V’ आकार की घाटी**-नदियों द्वारा निर्मित गहरी एवं सँकरी घाटियों को ‘V’ आकार की घाटी कहते हैं। इनका आकार अंग्रेजी वर्णमाला के ‘V’ अक्षर की भाँति होता है, जिससे इन्हें ‘V’ आकार की घाटी कहते हैं। इनके किनारे तीव्र ढाल वाले होते हैं। ये घाटियाँ किनारों पर चौड़ी तथा तली में अधिक संकुचित होती हैं। कुछ नदियाँ अपनी घाटी को और अधिक गहरा करती जाती हैं। इस अत्यधिक गहरी ‘V’ आकार की घाटी को कन्दरा (Gorge) कहते हैं। उदाहरण के लिए-भारत की सिन्धु, सतलुज, नर्मदा, कृष्णा, चम्बल आदि नदियाँ अनेक स्थानों पर कन्दराओं का निर्माण करती हैं। भाखड़ा बाँध तो सतलुज नदी की कन्दरा पर ही निर्मित है। कम चौड़ी, अधिक गहरी तथा अधिक सँकरी घाटी को कैनियन कहते हैं।

(ii) **जल-प्रपात या झरना (Waterfall)**- यह नदी अपरदन द्वारा निर्मित प्राकृतिक सौन्दर्य में वृद्धि करने वाली प्राकृतिक स्थलाकृति है। जब कोई नदी उच्च पर्वत-श्रेणियों से नीचे की ओर गिरती है तो ढाल में असमानता के कारण जल-प्रपातों का निर्माण करती है। नदी का जल मार्ग में पड़ने वाली कठोर चट्टानों को नहीं काट पाता, परन्तु कोमल चट्टानों को आसानी से काट देता है। कुछ समय पश्चात् कठोर चट्टान को भी सहारा न मिल पाने के कारण वह शिलाखण्ड भी टूटकर गिर जाता है। इस प्रकार, “नदी प्रवाह की ऐसी असमानता जिसमें नदी का जल एकदम ऊपर से नीचे की ओर गिरता है, जल-प्रपात या झरना कहलाता है।” जल निरन्तर शैलों को काटता रहता है जिससे इन प्रपातों की ऊँचाई कम होने लगती है।

2. प्रौढ़ावस्था (Mature Stage)-नदी जब युवावस्था को पार कर मैदानी भागों में प्रवेश करती है। तो यह उसकी प्रौढ़ावस्था होती है। इस समय नदी का वेग कुछ कम हो जाता है तथा नदी द्वारा किये जाने वाले

कटाव कार्य में कुछ कमी आती है। इस अवस्था में नदी अपनी घाटी को चौड़ा करना प्रारम्भ कर देती है। नदी इस समय पाश्विक अपरदन अधिक करती है। इस अवस्था में नदी अपने साथ लाये हुए मलबे को जमा करना प्रारम्भ कर देती है। इससे जलोढ़-पंख, जलोढ़-शंकु, गोखुर झीलें, बाढ़ के मैदान आदि स्थलाकृतियों का निर्माण होता है। इस अवस्था में नदी मैदानी भागों में बहुत मन्द गति से प्रवाहित होती है जिससे प्रवाह मोड़ों एवं बाढ़ के मैदानों का निर्माण करते हुए नदी आगे बढ़ती है। प्रौढ़ावस्था में नदी निम्नांकित भू-आकृतियों का निर्माण करती है

(i) जलोढ़ पंख (Alluvial Fans)-पर्वतीय क्षेत्रों से जैसे ही नदी मैदानी क्षेत्रों में प्रवेश करती है तो नदी की प्रवाह गति मन्द पड़ जाती है, जिसके कारण उसकी अपवाह क्षमता भी कम रह जाती है। अतः नदी भारी पदार्थों को अपने साथ प्रवाहित करने में असमर्थ रहती है और उनका निक्षेप करना प्रारम्भ कर देती है। पर्वतपदीय भागों में नदी बजरी, पत्थर, कंकड़, बालू, मिट्टी आदि पदार्थों का निक्षेपण शंकु के रूप में करती है। इनके बीच से होकर अनेक छोटी-छोटी धाराएँ निकल जाती हैं। इस प्रकार के अनेक शंकु मिलकर पंखे जैसी आकृति का निर्माण करते हैं जिससे उन्हें जलोढ़ पंख का नाम दिया जाता है।

(ii) नदी विसर्प अथवा नदी मोड़ (River Meanders)-जब नदी घाटी में उतरती है तो उसका प्रवाह मन्द पड़ जाता है। इससे नदियों के अवसाद ढोने की शक्ति कम हो जाती है। अतः ऐसी दशा में नदियाँ अपने साथ लाये हुए अवसाद को किनारों पर छोड़ती जाती हैं, परन्तु उसके मार्ग में थोड़ा-सा भी अवरोध उसके प्रवाह को आसानी से इधर-उधर मोड़ देता है। ये मोड़ ही नदी विसर्प कहलाते हैं।

(iii) धनुषाकार झीलें अथवा गोखुर झीलें (Oxbow Lakes)-प्रारम्भ में नदी-मोड़ या विसर्प छोटे होते हैं, परन्तु धीरे-धीरे इनका आकार बड़ा तथा घुमावदार होता जाता है। जब ये विसर्प अधिक बड़े तथा घुमावदार होते हैं, तब नदी घुमावदार दिशा में प्रवाहित न होकर सीधे ही प्रवाहित होने लगती है तथा नदी का यह मोड़ कटकर मुख्य धारा से बिल्कुल अलग हो जाता है। इससे एक झील-सी निर्मित हो जाती है जिसकी आकृति धनुष के आकार में अथवा गाय के खुर के समान हो जाती है। अतः इसे धनुषाकार झील अथवा छाड़न या गोखुर झील कहते हैं।

(iv) बाढ़ के मैदान (Flood Plains)-मैदानी प्रदेशों में नदियों की प्रवाह शक्ति क्षीण हो जाने के कारण उसकी तली में मलबा एकत्रित होना प्रारम्भ हो जाता है जिससे नदी को जल दोनों किनारों की ओर दूर तक फैल जाता है। एक समय ऐसा आता है कि नदी और अधिक जल को धारण करने की क्षमता नहीं रख पाती तथा यह जल किनारों को पार कर बाहर की ओर फैल जाता है। एवं नदी में बाढ़ आ जाती है। जैसे ही बाढ़ समाप्त होती है तो बालू एवं कांप मिट्टी के निक्षेप बाढ़-क्षेत्र पर छा जाते हैं तथा इसमें लहरें-सी पड़ जाती हैं। इन्हें ही बाढ़ के मैदान के नाम से जाना जाता है।

(v) **प्राकृतिक तटबन्ध (Natural Levees)**-नदी जब बाढ़ से युक्त होती है तो वह अपने किनारों पर बजरी, कंकड़, बालू तथा मिट्टी आदि का जमाव कर देती है। जिससे किनारों पर ऊँचे-ऊँचे बाँध बन जाते हैं। इन्हें ही प्राकृतिक तटबन्ध के नाम से पुकारा जाता है।

3. वृद्धावस्था या जीर्णावस्था (Old Stage)-नदी के अन्तिम अवस्था में आते ही उसकी सामान्य स्थिति में बड़ा परिवर्तन हो जाता है। इस अवस्था में नदी मैदानी क्षेत्र से निकलकर डेल्टाई प्रदेश में प्रवेश करती है। नदी अपने सम्पूर्ण जल सहित आधार तल (Base level) तक पहुँच जाती है। इस समय नदी का अपरदन कार्य पूर्ण रूप से समाप्त हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप नदी-घाटी की गहराई बहुत कम हो जाती है तथा नदी की चौड़ाई निरन्तर बढ़ती जाती है। इस अवस्था में नदियों के बाढ़ के मैदान अत्यधिक विस्तृत हो जाते हैं तथा नदी की भार वहन करने की शक्ति क्षीण हो जाती है। नदी अपने मुहानों पर डेल्टाओं का निर्माण करती है। इसी अवस्था में एस्चुअरी, बालुका-द्वीप एवं बालुका-भित्ति का निर्माण होता है तथा नदी डेल्टा बनाती हुई महासागर में गिर जाती है और अपना अस्तित्व सदा के लिए समाप्त कर देती है। वृद्धावस्था में निम्नलिखित स्थलाकृतियों का निर्माण होता है

(i) **डेल्टा (Delta)**—प्रत्येक नदी अपनी अन्तिम अवस्था में सागर, झील अथवा महासागर में गिरती है तो गिरने वाले स्थान पर अपने छ साथ लाये हुए अवसाद को एकत्रित करती रहती है। यह अवसाद लाखों वर्ग किमी क्षेत्र में एकत्रित हो जाते हैं तथा इसकी साधारण ऊँचाई समुद्र तल से अधिक होती है; अतः इस उठे हुए भाग को ही डेल्टा कहते हैं। इस डेल्टा शब्द को ग्रीक भाषा के अक्षर A (डेल्टा) से लिया गया है, क्योंकि इस स्थल स्वरूप का आकार भी इस अक्षर से मिलता-जुलता है। डेल्टा छोटे-बड़े कई प्रकार के होते हैं। इनका जमाव विशालतम पंखे जैसा होता है। इसके द्वारा नदी के मार्ग में अवरोध डाला जाता है। इसीलिए नदी उसे कई स्थानों पर काट देती है। कहीं-कहीं कुछ भाग ऊँचे खड़े रह जाते हैं, जिन्हें मोनाडनाक कहते हैं। इनकी आकृति त्रिभुजाकार होती है। आकृति के अनुसार डेल्टा निम्नलिखित प्रकार के होते हैं—

(अ) **चापाकार या धनुषाकार डेल्टा**-नदी की अवसाद में कंकड़, पत्थर, मिट्टी, बालू आदि जल में घुले रहते हैं। कुछ अवसाद बहुत ही बारीक होते हैं। अतः ऐसी नदी जो अपने साथ लाये हुए अवसाद को मध्य में अधिक तथा किनारों पर कम मात्रा में निक्षेपित करती है, चापाकार या धनुषाकार आकृति का निर्माण करती है, जिसे चापाकार डेल्टा कहते हैं। सिन्धु, पो, राइन तथा गंगा-ब्रह्मपुत्र के डेल्टा इसी प्रकार के हैं।

(ब) **पंजाकार डेल्टा**-चिड़िया के पंजे की शक्ल में डेल्टाओं का निर्माण बारीक कणों से होता है, जो चूनायुक्त जल में घोल के रूप में घुले रहते हैं। बारीक कण भारी होने के कारण नदी के बहाव में सागर की तली में दूर-दूर तक पहुँच जाते हैं तथा तली में बैठते जाते हैं। अनेक दिशाओं से आने वाली नदियाँ आपस में मिलकर अपने पाश्र्वो पर मोटी अवसाद जमा कर देती हैं जिनसे यह निक्षेप पक्षी के पंजे की भाँति हो जाता है, इसीलिए इसे पंजाकार डेल्टा कहते हैं।

(स) **ज्वारनदमुखी डेल्टा**-इस प्रकार के डेल्टा का निर्माण नदियों के पूर्वनिर्मित मुहानों पर होता है। ऐसे मुहाने जो नीचे को धँसे हुए होते हैं, उनमें अवसाद एक लम्बी, सँकरी धारा के रूप में जमा होती जाती है।

नदियों के इस मुहाने को एस्चुअरी कहते हैं। यह अवसाद ज्वार-भाटे द्वारा सागरों में ले जायी जाती है। इसी कारण यह पूर्ण रूप से डेल्टा नहीं बन पाता।

(ii) **बालुका-द्वीप एवं बालुका-भित्ति-मन्द गति** के कारण नदी अपने साथ लाये अवसाद को आगे बहाकर ले जाने में असमर्थ रहती है, क्योंकि जलगति क्षीण होती है। अतः अवसाद स्थान-स्थान पर कम होती जाती है। इस प्रकार नदी के बाढ़ के मैदान या चौड़ी घाटियों में बालू के द्वीप एवं बालुका-भित्ति का निर्माण होता है। इनका आकार भिन्न-भिन्न होता है। इन्हें भिन्न-भिन्न स्थानों पर अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है।

नदी के निक्षेपण कार्य से निर्मित भू-आकृतियों का मानव के लिए महत्त्व

नदी के निक्षेपण कार्य से बनी भू-आकृतियाँ मानव के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं। जलोढ़ पंखों से बने नदी के मैदान कृषि, उद्योग, परिवहन एवं मानव बसाव की दृष्टि से बहुत उपयोगी हैं। धनुषाकार झीलें सिंचाई, पेयजल एवं नौका विहार की सुविधाएँ प्रदान करके मानव के हित में वृद्धि करती हैं। इनसे जलवायु पर भी समकारी प्रभाव पड़ता है।

डेल्टाओं से उपजाऊ भूमि का निर्माण होता है। विश्व में गंगा, सिन्धु, ब्रह्मपुत्र, अमेजन और नील नदियाँ उपजाऊ डेल्टाओं का निर्माण करती हैं। डेल्टाई क्षेत्र चावल, जूट तथा गन्ना आदि फसलों के उत्पादन की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। अधिक उपजाऊ होने के कारण डेल्टाई क्षेत्रों में घनी जनसंख्या पायी जाती है। गंगा का डेल्टा इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

प्रश्न 2. हिमानी द्वारा अपरदन एवं निक्षेपण से निर्मित स्थलाकृतियों का वर्णन कीजिए।

या हिमानी द्वारा निर्मित तीन अपरदनात्मक एवं दो निक्षेपणात्मक स्थलरूपों का वर्णन कीजिए।

या हिमानी के अपरदन एवं निक्षेपण कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर-हिमानी या हिमनद

स्थायी हिम क्षेत्रों से बर्फ की मोटी चादर का भार, ढाल के प्रभाव एवं गुरुत्वाकर्षण शक्ति के प्रभाव से ढाल की ओर खिसकने लगता है। इसी खिसकते हुए हिमखण्ड को हिमानी अथवा हिमनद कहते हैं। अपरदन के अन्य कारकों की भाँति हिमानी भी विशिष्ट भू-आकृतियों को जन्म देती है। विश्व में उच्च अक्षांशों एवं शीत-प्रधान प्रदेशों में हिमानियों का विस्तार मिलता है। हिमवृष्टि के समय वायुमण्डल में उपस्थित जलवाष्प का भी योग रहती है। हिम-कण हल्के एवं असंगठित होते हैं। काफी हिमवर्षा होने के बाद हिम के निरन्तर दबाव पड़ने के फलस्वरूप हिम-कण ठोस चट्टानों में बदल जाते हैं। शीत-प्रधान प्रदेशों में लगभग 9 माह हिमवर्षा होती है। विश्व के केवल ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप को छोड़कर प्रत्येक महाद्वीप में हिम क्षेत्र पाये जाते हैं। हिमनद भी अन्य कारकों की भाँति अपरदन, परिवहन तथा निक्षेपण का कार्य करता है।

हिमानी के कार्य

हिमानी निम्नलिखित तीन कार्यों को सम्पन्न करती है-

1. हिमानी का अपरदनात्मक कार्य

हिमानी द्वारा अपरदन का कार्य उस समय अधिक होता है जब उसके साथ कंकड़, बजरी और पत्थर प्रवाहित होते हैं। हिम के साथ चलने वाले कंकड़ और पत्थर रेगमाल की भाँति कार्य करते हैं जिससे अपघर्षण की क्रिया होती है। इनकी सहायता से हिमानी अपनी तली तथा किनारों को घिसकर चिकना करती रहती है तथा साथ-ही धरातल को खुरचते हुए प्रवाहित होती है। इसके द्वारा सर्क, हिमशृंग आदि भू-आकृतियाँ निर्मित होती हैं।

हिमानी का अपरदन कार्य उसकी गति तथा उसके साथ प्रवाहित कंकड़-पत्थर पर अधिक निर्भर करता है। रैमसे एवं टिण्डल नामक विद्वानों ने बताया है कि हिमानी न केवल अपने अपरदन कार्यों द्वारा विभिन्न भू-आकृतियों का निर्माण करती है, बल्कि पहले से विकसित स्थलरूपों में परिवर्तन भी करती है। हिमानी अपरदन के द्वारा सुन्दर प्राकृतिक भू-दृश्यों का निर्माण करती है।

हिमानीकृत अपरदन से निर्मित भू-आकृतियाँ-हिमानीकृत अपरदन में बड़ी भिन्नता पायी जाती है, क्योंकि इसका यह कार्य बहुत ही धीमी गति से होता है। हिमानी द्वारा अपरदन कार्य से निम्नलिखित भू-आकृतियों का निर्माण होता है

(अ) 'यू' आकार की घाटी ('U' Shaped Valley)-हिमानी पर्वतीय क्षेत्रों में ऐसी घाटियों से प्रवाहित होती है जिनके ढाल खड़े तथा तली चौरस एवं सपाट होती है। घाटियों का अपरदन होने से इनका आकार अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षर 'यू' (U) की भाँति हो जाता है। विस्तृत हिमानी क्षेत्र में इन घाटियों के ऊपर सहायक घाटियाँ लटकती दिखाई देती हैं। इन घाटियों का निर्माण पहले से विकसित नदी-घाटियों में होता है। बाद में हिमानीकृत अपरदन कार्य से इसका विस्तार एवं विकास कर लेती है। 'यू' आकार की घाटी के निर्माण में निम्नांकित विशेषताएँ होती हैं-(i) इस घाटी का भौतिक आकार अंग्रेजी के 'यू' (U) अक्षर जैसा होता है, (ii) इसका तल चौरस तथा गहरा होता है, (iii) 'यू' आकार की घाटी के किनारों का ढाल खड़ा होता है, (iv) इसमें छोटे-छोटे हिमोढ़ों का अभाव होता है, (v) इन घाटियों का विकास उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में होता है एवं (vi) इस घाटी के निर्माण में आग्नेय तथा परतदार चट्टानों का योग होता है।

(ब) लटकती घाटी (Hanging Valley)-मुख्य हिमानी तथा उसकी सहायक हिमानियों के मध्य अपरदन के फलस्वरूप जो आकृति बनती है, उसे लटकती हुई घाटी अथवा निलम्बी घाटी कहते हैं। मुख्य हिमानी का अपरदन सहायक हिमानियों की अपेक्षा अधिक होता है, क्योंकि मुख्य हिमानी सहायक हिमानियों से अधिक गहरी होती है। इसी कारण सहायक हिमानियों की घाटियाँ मुख्य हिमानी से जहाँ मिलती हैं, वहाँ इनका ढाल तीव्र एवं खड़ा होता है। इसीलिए इन घाटियों की हिम लटकती हुई प्रतीत होती है।

(स) सर्क या हिमज गहवर (Cirque)-उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में हिमानी ढालों पर गड्ढे बनाती हुई प्रवाहित होती है। हिमानी के अपरदन से गड्ढे धीरे-धीरे काफी चौड़े एवं गहरे होते जाते हैं। ऐसे । विशाल, चौड़े तथा गहरे गत को हिमज गहवर कहते हैं। इनकी आकृति कटोरे की भाँति होती है। इन्हें कोरी या कारेन अथवा सर्क भी कहते हैं।

(द) हिमशृंग एवं हिमपुच्छ (Crag and Tail)-हिमानी द्वारा ऊँचे उठे भागों पर जब अपरदन द्वारा उबड़-खाबड़ खड़ा ढाल निर्मित हो जाता है तो हिमशृंग की आकृति का निर्माण होता है। इनका ढाल तीव्र होता है, जबकि दूसरी ओर ढाल मन्द होता है जो एक लम्बी एवं पतली पूँछ के आकार का होता है, जिसे हिमपुच्छ कहते हैं।

(य) गिरिशृंग (Horn)-हिमानी द्वारा निर्मित यह एक प्राकृतिक स्थलाकृति है। पर्वतों की चोटियों के । सहारे जब चारों ओर निर्मित सर्क को हिमानी अधिक गहराई में काट लेती है तो इसकी आकृति शिखर की भाँति हो जाती है, जिसे गिरिशृंग के नाम से पुकारा जाता है।

2. हिमानी का परिवहन कार्य

हिमानी का परिवहन कार्य तभी सम्पन्न होता है जब वह अपने उद्गम स्थान से आगे की ओर खिसकती है। अपरदन के अन्य कारकों की भाँति हिमानी भी अपने साथ कंकड़-पत्थर, शिलाखण्ड, बालू-कणे, मिट्टी आदि लेकर आगे बढ़ती है। यह अवसाद हिमानी के अनेक भागों से टकराता हुआ आगे बढ़ता है। हिमानी की तली में रगड़ खाता हुआ मलबा तलस्थ हिमोढ़ों का निर्माण करता है। किनारों पर घिसकर चलता हुआ मलबा पार्श्व हिमोढ़ों का निर्माण करता है। बहुत-सा मलबा हिमानी के सबसे आगे वाले भाग पर रगड़ खाता हुआ चलता है, जिससे अग्रान्तस्थ हिमोढ़ का निर्माण होता है। हिमानी के साथ चलने वाले भारी शिलाखण्डों का व्यास 12 मीटर से 15 मीटर तक होता है।

3. हिमानी का निक्षेपणात्मक कार्य

अधिकांशतः हिमानी का निक्षेपण कार्य तभी सम्भव हो पाता है जब हिम पिघलना प्रारम्भ कर देता है। हिमानी अपने साथ लाये गये मलबे को विभिन्न रूपों में जमा करती जाती है। हिमानी के निक्षेपण कार्य से निम्नलिखित भू-आकृतियों का निर्माण होता है

(अ) हिमनद हिमोढ़ (Glacial Moraines)-हिमानी जैसे ही आगे की ओर प्रवाहित होती है, नदी-घाटियों के शिलाखण्ड, बालू, कंकड़-पत्थर, मिट्टी आदि भी इसके साथ आगे की ओर बढ़ते हैं। अधिकांशतः यह मलबा शैलों के टूटने तथा हिमानी की तली एवं किनारों से प्राप्त होता है। इस प्रकार यह अवसाद विभिन्न भागों में एकत्र हो जाती है। एकत्रित अवसाद को ही हिमनद हिमोढ़ कहते हैं।

(ब) हिमनदोढ़ टिब्बा (Drumlin)-हिमानी के निक्षेपण कार्य से निर्मित यह एक टीलेनुमा आकृति होती है जो आकार में उल्टी नाव के समान होती है। हिमानी के सामने वाला भाग खड़े ढाल वाला तथा पीछे का भाग कम ढाल वाला होता है। वास्तव में इस प्रकार की आकृतियों का निर्माण हिमानी के आगे-पीछे हटने पर होता है। जब हिमानी पीछे हटती है तो वह आगे अग्रान्तस्थ हिमोढ़ बनाती है। इस प्रकार कई बार आगे-

पीछे हटने से एक ही क्रम में अग्रांतस्थ हिमोढ़ों की रचना होती है। जब हिमानी पुनः आगे की ओर प्रवाहित होती है तो पहले से विकसित हिमोढ़ों के ऊपर से होकर आगे बढ़ जाती है। इस प्रकार सामने वाला भाग खड़े ढाल वाला तथा खुरदरा हो जाता है तथा विपरीत ढाल सामान्य होता है, जिसे हिमनदोढ़ टिब्बा कहा जाता है।

(स) एस्कर (Esker)-ये हिमानी एवं जल के मिश्रित प्रभाव द्वारा निर्मित घाटियों में स्थित कम ऊँचे, कम लम्बे तथा कम चौड़े बल खाते हुए टीले के आकार में घाटी के प्रवाह की दिशा में फैले होते हैं। हिमानी के मार्ग में पहले से विकसित जितनी भी भू-आकृतियाँ होती हैं, ये उनके ऊपर बिछ जाते हैं। ये 60 से 90 मीटर ऊँचे तथा 24 किमी तक लम्बे होते हैं।

प्रश्न 3. मरुस्थलीय स्थलाकृतियों के विकास में वायु के कार्यों की विवेचना कीजिए।

या अपरदन एवं निक्षेपण के कारक के रूप में वायु के कार्यों का वर्णन कीजिए तथा इसके द्वारा निर्मित स्थलाकृतियों की विवेचना कीजिए। |

या पवन के कार्य तथा उससे उत्पन्न स्थलाकृतियों का विवरण दीजिए।

उत्तर-अपरदन के अन्य कारकों से वायु का कार्य पर्याप्त भिन्नता रखता है, परन्तु अर्द्ध-शुष्क मरुस्थलीय भागों में वायु अपरदन का एक प्रमुख साधन होती है। ध्रुवीय भागों को छोड़कर समस्त स्थलीय भाग का 30% क्षेत्रफल मरुस्थलीय है। अतः वायु व्यापक क्षेत्र पर अपने कार्यों का सम्पादन करती है तथा अपरदन में सहयोग देती है।।

वायु अपने अपरदनात्मक कार्यों द्वारा स्थलीय भाग को अपरदित कर प्राप्त चट्टान-चूर्ण एवं रेत-कणों का कुछ दूरी तक परिवहन करती है तथा अवरोध पर उपस्थित होने पर निक्षेपण की क्रिया द्वारा विभिन्न स्थलरूपों का निर्माण करती है।

(1) वायु का अपरदनात्मक कार्य ।

पवन द्वारा अपरदन का कार्य यान्त्रिक है। यह अपने साथ उड़ाकर ले जाए जाने वाले मोटे बालू-कणों एवं चट्टान-चूर्ण की सहायता से अपरदन कार्य सम्पन्न करती है। यह कार्य वायुमण्डल के निचले स्तरों में अधिक होता है, क्योंकि नीचे की ओर ही धूल-कणों की मात्रा अधिक होती है। शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क भागों में यह कार्य अधिक देखने को मिलता है। वायु द्वारा अपरदन कार्य तीन प्रकार से सम्पन्न होता है—

(i) अपवाहन (Deflation)-इसे उड़ाने का कार्य भी कहते हैं। इसके लिए सतह का पूर्ण रूप से शुष्क होना अति आवश्यक है। इसमें वायु शुष्क एवं असंगठित पदार्थों को अपने साथ उड़ा ले जाती है। यह पदार्थ दूर-दूर तक पवन के साथ उड़ते चले जाते हैं।

(ii) अपघर्षण (Abrasion)-तीव्र वेग वाली वायु अपघर्षण की क्रिया के लिए उपयुक्त होती है। वास्तव में मोटे धूल-कण ही अपरदन के मुख्य यन्त्र हैं। इनके द्वारा चट्टानें घिस-घिसकर चिकनी हो जाती हैं।

धूल-कणों के अपघर्षण से चट्टानों में खरोंचें पड़ जाती हैं। वायु द्वारा अपघर्षण का यह कार्य सतह के समीप अधिक होता है।

(iii) सन्निघर्षण (Attrition)-वायु की तीव्रता में उड़ने वाले कण मार्ग में पड़ने वाली चट्टानों से टकराकर चट्टानों को तो घिसते ही हैं, साथ ही स्वयं टूटकर भी छोटे होते जाते हैं। इस प्रकार से परस्पर टकराने तथा बिखरने की क्रिया को सन्निघर्षण कहते हैं। वायु द्वारा अपरदन कार्य प्रत्येक क्षेत्र में समान गति एवं एक निश्चित समय में होना असम्भव है।

वायु के अपरदन कार्यों पर तथ्यों को भी प्रभाव पड़ता है—(अ) वायु वेग, (ब) धूल-कणों का आकार एवं ऊँचाई, (स) चट्टानों की संरचना एवं (द) जलवायु।।

वायु की अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ।

1. वातगर्त (Blow Out)-भू-सतह के ऊपर वायु के निरन्तर प्रहार से एक ही स्थान की कोमल एवं ढीली चट्टानें अपरदित होती रहती हैं। इसे वायु अपने साथ उड़ा ले जाती है। इस प्रकार उस स्थान पर गर्त-सा निर्मित हो जाता है, जिसे वातगर्त कहते हैं। इनका आकार तश्तरीनुमा होता है।

2. इन्सेलबर्ग (Inselberg)-इन्हें गुम्बदनुमा टीले भी कहते हैं। मरुस्थलीय क्षेत्रों में वायु के अपरदन से कोमल चट्टानें आसानी से कट जाती हैं, परन्तु कठोर चट्टानों के अवशेष ऊँचे-ऊँचे टीलों के रूप में खड़े रह जाते हैं। इस प्रकार के टीलों या टापुओं को इन्सेलबर्ग के नाम से पुकारते हैं। इनका निर्माण नीस अथवा ग्रेनाइट चट्टानों के अपक्षय तथा अपरदन से होता है।

3. छत्रक शिला (Mushroom Rocks)-मरुस्थलीय भागों में कठोर शैल के ऊपरी आवरण के नीचे कोमल शैल लम्बवत् रूप में मिलती है तो उस पर अपघर्षण के प्रभाव से चट्टानों के निचले भाग इस तरह कट जाते हैं कि उनका आकार छत्ररीनुमा हो जाता है, जिन्हें छत्रक शिला कहते हैं। सहारा मरुस्थल में इन्हें हमदा के नाम से पुकारते हैं।

4. भू-स्तम्भ (Domoiselles)-शुष्क प्रदेशों में, जहाँ असंगठित मलबे से बनी कोमल चट्टानों के ऊपर कठोर चट्टान की परत जमा हो तो वहाँ वायु द्वारा असंगठित चट्टानों का अपरदन करते रहने से ऊँचे-नीचे टीले बने रह जाते हैं। इनके शिखर कठोर चट्टानों से निर्मित होते हैं। इस प्रकार की भू-आकृतियों को भू-स्तम्भ कहते हैं। मरुस्थलीय नदियों की घाटियों में इस प्रकार के भू-स्तम्भ देखे जा सकते हैं।

5. ज्यूगेन (Zeugen)-इनकी आकृति ढक्कनदार दवात की भाँति होती है। इस प्रकार की आकृति मरुस्थलीय प्रदेशों में, जहाँ कोमल और कठोर चट्टानों की परतें एक-दूसरी के ऊपर बिछी होती हैं, निर्मित होती हैं। कठोर परतों की दरारों में ओस भरने के कारण तापमान निम्न हो जाता है जिससे दरारें और चौड़ी हो जाती हैं। दरारों के बढ़ने से कोमल चट्टानों की परतें निकल आती हैं। इन परतों का वायु आसानी से अपरदन कर लेती है जिससे चट्टानों के मध्य में घाटियाँ विकसित हो जाती हैं, जिन्हें ज्यूगेन कहते हैं।

6. यारडंग (Yardang)-यारडंग ज्यूगेन के विपरीत अवस्था में निर्मित होता है, अर्थात् जब कोमल और कठोर चट्टानों के स्तर लम्बवत् रूप में मिलते हैं तो वायु कोमल चट्टानों को आसानी से अपरदित कर उड़ा ले जाती है। इससे कठोर चट्टानों के अवशेष खड़े रह जाते हैं। मंगोलिया में इस प्रकार की स्थलाकृतियों को यारडंग कहते हैं।

7. त्रिकोण खण्ड (Dreikanter)-पथरीले मरुस्थलों के शिलाखण्डों पर वायु के अपरदन द्वारा खरोंचें पड़ जाती हैं, जिससे तरह-तरह की नक्काशी-सी हो जाती है। ऐसे शिलाखण्डों को त्रिकोण खण्ड कहते हैं।

(2) वायु का परिवहन कार्य।

वायु की दिशा अनिश्चित होने के कारण इसका परिवहन कार्य निश्चित नहीं होता। वायु भूतल की ऊपरी सतह पर चलती है; अतः अपरदित पदार्थों को बड़े पैमाने पर परिवहन नहीं कर पाती। हल्के पदार्थों का परिवहन दूरवर्ती भागों तक हो जाता है। सामान्यतया वायु के परिवहन द्वारा अपरदित पदार्थों का स्थानान्तरण अधिक दूरी तक नहीं हो पाता, परन्तु आँधी एवं तूफान के समय हजारों किमी की दूरी तक वायु द्वारा अपरदित पदार्थों को पहुँचा दिया जाता है। उदाहरणार्थ—सहारा के रेगिस्तान से चलने वाले तूफान बालू उड़ाकर भूमध्य सागर के पार इटली तथा जर्मनी तक पहुँचा देते हैं।

(3) वायु का निक्षेपणात्मक कार्य।

वायु का निक्षेपण कार्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण होता है। जब वायु की गति मन्द होती है तथा उसके मार्ग में कोई बाधा उपस्थित होती है तो उसके द्वारा वहन किये जाने वाला बहुत-सा पदार्थ भूतल पर बिछता जाता है। हल्के पदार्थ काफी दूर तक वायु के साथ उड़ जाते हैं तथा वहीं पर बिछा दिये जाते हैं। वायु द्वारा निक्षेपणात्मक स्थलाकृतियों की रचना के लिए वायु के मार्ग में विभिन्न अवरोधों; जैसे—वनों, झाड़ियों, दलदलों, नदियों, जलाशयों आदि का होना अति आवश्यक है।

निक्षेपणात्मक स्थलाकृतियाँ

वायु के निक्षेपण कार्यों से निम्नलिखित प्रमुख स्थलाकृतियों का निर्माण होता है

1. तरंग चिह्न या ऊर्मिका चिह्न (Ripples Mark)-मरुस्थलीय प्रदेशों में बालू के निक्षेप लहरों के रूप में दिखाई पड़ते हैं। इनका आकार और क्रम जल में उठने वाली लहरों के समान होता है। इनकी ऊँचाई एक इंच से भी कम होती है। इनकी पंक्तियाँ वायु की दिशा से लम्बवत् होती हैं। इन्हें ऊर्मिका चिह्न भी कहते हैं। वायु की दिशा में परिवर्तन से इनका स्वरूप भी बदलता रहता है।

2. बालुका-स्तूप या बालू के टीले (Sand-Dunes)-बालुका-स्तूप रेत के वे टीले होते हैं जो वायु द्वारा रेत के निक्षेप से निर्मित होते हैं। बालू के टीले उन स्थानों पर अधिक मिलते हैं जहाँ टीले रेत के कण प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हों तथा वायु की दिशा भी प्रायः स्थिर हो। इन टीलों के आकार तथा स्वरूप में पर्याप्त अन्तर मिलता है। बालू के टीलों का निर्माण शुष्क तथा अर्द्ध-शुष्क भागों के अतिरिक्त सागरतटीय क्षेत्रों, झीलों के रेतीले तटों, रेतीले प्रदेशों से बहने वाली नदियों के बाढ़ प्रदेशों आदि स्थानों में होता है।

सामान्यतया बालू के टीलों की ऊँचाई 30 मीटर से 60 मीटर तक पायी जाती है, परन्तु लम्बाई कई किमी तक होती है। कुछ टीलों की ऊँचाई 120 मीटर तथा लम्बाई 6 किमी तक देखी गयी है। इनका आकार गोल, नव-चन्द्राकार तथा अनुवृत्ताकार होता है। बालुका-स्तूपों के निर्माण के लिए निम्नलिखित भौगोलिक दशाओं का होना अति आवश्यक है (i) बालू की पर्याप्त मात्रा, (ii) तीव्र वायु-प्रवाह, (iii) वायु-मार्ग में अवरोध की स्थिति, (iv) बालू संचित होने का स्थान एवं (v) वायु का एक निश्चित दिशा में निरन्तर बहते रहना।। बालू के टीलों का जन्म प्रायः घास के गुच्छों, झाड़ी या पत्थर आदि द्वारा वायु के वेग में बाधा पड़ने से होता है। भूतल की अनियमितता भी बालू के टीलों को जन्म देती है। यह बाधा वायु वेग को कम कर देती है जिससे वायु में उपस्थित रेत के कणों का निक्षेप होना आरम्भ हो जाता है। यह निक्षेप विकसित होते-होते बालू के टीले निर्मित हो जाते हैं।

बालुका-स्तूपों के प्रकार (Types of Sand-Dunes)-आकार के आधार पर बालुका-स्तूप निम्नलिखित प्रकार के होते हैं

(i) अनुप्रस्थ बालुका-स्तूप (Transverse Sand-Dunes)- इस प्रकार के बालुका-स्तूप ऐसे क्षेत्रों में पाये जाते हैं, जहाँ वायु काफी समय से एक ही दिशा में बह रही हो। इनकी संरचना वायु की दिशा से लम्बवत् होती है। इन टीलों का शीर्ष वायु के विपरीत तथा रचना अर्द्ध-चन्द्राकार आकृति में होती है। वायु द्वारा निर्मित टीलों से बालू के कण मध्य भाग से उड़ते रहते हैं, जिससे मध्य भाग धीरे-धीरे खोखला हो जाता है।

(ii) समानान्तर बालुका-स्तूप, (Longitudinal Sand-Dunes)-इस प्रकार के बालुका-स्तूप की रचना एक विशेष परिस्थिति में होती है। इनकी आकृति पहाड़ी जैसी होती है। वायु की प्रवाह दिशा के समानान्तर लगातार इनका निर्माण होता रहता है। सहारा मरुस्थल में ऐसे टीलों को 'सीफ' नाम से पुकारा जाता है। विश्व में ऐसे बालुका स्तूप अधिक पाये जाते हैं, क्योंकि ये अधिक समय तक स्थिर रहते हैं।

(iii) अर्द्ध-चन्द्राकार बालुका-स्तूप (Parabolic Sand-Dunes)-ऐसे स्तूप की रचना वायु की दिशा के तीव्र प्रवाह के विपरीत बालू को मार्ग में एकत्रित करने से होती है। इनका आकार लम्बाई में अधिक होता है। इन स्तूपों का ढाल वायु की दिशा की ओर मन्द तथा विपरीत दिशा में तीव्र होता है। इन पर वनस्पति उग आती है जिससे ये आगे-पीछे नहीं खिसक पाते। इन टीलों का निर्माण बहुत कम होता है।

बालुका-स्तूपों का पलायन या खिसकना (Migration of Sand-Dunes)— अधिकांश बालुका स्तूप अपने स्थान पर स्थिर नहीं रहते तथा अपना स्थान परिवर्तन करते रहते हैं। बालुका टिब्बों के इस स्थान परिवर्तन को पलायन कहा जाता है। इससे इन स्तूपों का आकार कम होता रहता है, परन्तु कुछ टीले इस : प्रक्रिया में नष्ट भी हो जाते हैं।

वायु की दिशा के सामने से बालू-कण शिखर पर पहुँचकर विपरीत ढाल पर एकत्रित होते रहते हैं। इससे वायु के सामने का भाग छोटा और ढाल बढ़ता जाता है। जब अधिक समय तक यही प्रक्रिया होती रहती है

तो बालुका-स्तूप वायु की दिशा में स्थानान्तरित होने लगते हैं। टिब्बों का पलायन सभी स्थानों पर समान गति से नहीं होता। पलायन की गति स्थानीय परिस्थितियों पर निर्भर करती है। प्रायः बालुका टिब्बों का पलायन कुछ मीटर प्रतिवर्ष की दर से अधिक नहीं होता, परन्तु कहीं-कहीं पलायन की गति 30 मीटर वार्षिक की दर से अधिक पायी जाती है। संयुक्त राज्य के ओरेगन तट पर विशाल बालुका टिब्बा लगभग 1.2 मीटर प्रतिवर्ष की दर से पलायन कर रहे हैं।

(iv) बरखान (Barkhans)- ऊँची-नीची पहाड़ियों के मध्य बरखान पाये जाते हैं। कभी-कभी ये इधर-उधर भी बिखर जाते हैं। सहारा मरुस्थल में बरखान के बीच आने-जाने का रास्ता भी होता है, जिसे गासी और कारवाँ के नाम से जानते हैं। इनकी आकृति भी अर्द्ध-चन्द्राकार एवं धनुषाकार होती है। वायु की दिशा बदलने पर बरखान की स्थिति में भी परिवर्तन आ जाता है। इनका

आकार 100 मील तक लम्बा तथा 600 फीट तक ऊँचा होता है। बरखान के सामने वाला ढाल मन्द तथा विपरीत वाला ढाले अवतल होता है।

3. लोयस (Loess)-वायु में मिट्टी के बारीक कण लटक रहे हैं। ये दूर-दूर जाकर वायु द्वारा निक्षेपित कर दिये जाते हैं। इस प्रकार वायु द्वारा उड़ाई गयी धूल-कणों के निक्षेप से निर्मित स्थल स्वरूपों को लोयस कहा जाता है। लोयस के निर्माण के लिए धूल आदि आवश्यक सामग्री मरुस्थलीय भागों की रेत, नदियों के बाढ़ क्षेत्र, रेतीले समुद्रतटीय क्षेत्र तथा हिमानी निक्षेपण जनित अवसाद मिलना अति आवश्यक है। लोयस का जमाव समुद्रतल से लेकर 5,000 फीट की ऊंचाई तक पाया जाता है। इसका रंग पीला होता है जिसका प्रमुख कारण ऑक्सीकरण क्रिया का होना है। विश्व में लोयस की मोटाई 300 मीटर तक पायी जाती है। चीन में हवांगहो नदी के उत्तर व पश्चिम में लोयस के जमाव मिलते हैं।

4. धूल-पिशाच (Dust-Devil)-इस क्रिया में धूल के कण वायु द्वारा ऊपर उठा दिये जाते हैं। वायु में भंवरें उत्पन्न होने के कारण धूल के महीन कण ऊपर उठकर एक पिशाच का रूप धारण कर लेते हैं। इसे ही 'धूल-पिशाच' कहा जाता है।

5. बजादा (Bajada)-मरुस्थलों में अचानक ही वर्षा हो जाने से बाढ़ आ जाती है। अस्थायी नदियाँ तीव्र ढालों पर घाटियाँ काट लेती हैं। ढाल का मलबा तीव्रता से कट जाता है तथा नीचे की ओर जलोढ़ पंख का निर्माण हो जाता है। जब किसी बेसिन में इस प्रकार के कई पंख एक साथ मिल जाते हैं तो एक गिरिपदीय, ढाल क्षेत्र बन जाता है, जिसे 'बजादा' कहा जाता है।

6. प्लाया (Playa)-मरुस्थलों में भारी वर्षा होने के कारण कहीं पर गड्ढा-सा बन जाता है। यहाँ पर जल भर जाने से झील निर्मित हो जाती है। ऐसी झीलों को प्लाया झील कहते हैं।

7. बोल्सन (Bolson)-यदि किसी पर्वत से घिरे विस्तृत मरुस्थल के निचले भाग की ओर नदियाँ बाढ़ के समय अवसाद गिराती हैं तो बेसिन का फर्श जलोढ़ मिट्टी से भर जाता है। ऐसे बेसिनों को 'बोल्सन' कहते हैं।

**प्रश्न 4. भूमिगत जल के अपरदनात्मक कार्य एवं उनसे उत्पन्न स्थलाकृतियों की विवेचना कीजिए।
या भूमिगत जल के परिवहन कार्य का वर्णन कीजिए।**

उत्तर-भूमिगत जल मन्द गति से प्रवाहित होता हुआ अपने रासायनिक तथा यान्त्रिक कार्यों द्वारा अपरदन के अन्य कारकों के समान चट्टानों को अपरदित कर उससे प्राप्त मलबे का कुछ सीमा तक परिवहन करता है। तथा अन्त में कोई अवरोध उपस्थित हो जाने पर उसका निक्षेपण कर देता है।

भूमिगत जल द्वारा अपरदनात्मक कार्य

भूमिगत जल का अपरदन कार्य अन्य कार्यों की अपेक्षा कम महत्त्वपूर्ण एवं मन्द गति वाला होता है। यह जल चुनायुक्त प्रदेशों में रन्ध्रयुक्त शैलों में प्रवेश कर जाता है। इसी कारण यह स्वतन्त्र रूप से कार्य नहीं कर पाता। भूमिगत जल द्वारा यान्त्रिक अपरदन वर्षा ऋतु में अधिक होता है, जबकि रासायनिक अपरदन अबैध गति से चलता रहता है। वर्षा का जल भूमि में प्रवेश कर कार्बनयुक्त हो जाता है जिससे वह रासायनिक क्रिया कर चट्टानों को अपने में घोल लेता है तथा विचित्र प्रकार की स्थलाकृतियों को जन्म देता है। इसके अपरदन कार्यों (घोलन) द्वारा निम्नलिखित स्थलाकृतियों का निर्माण होता है

अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ

1. लैपीज या अवकूट (Lappies)-वर्षा का जल चूने की सतहों से होकर नीचे चला जाता है। दरारों के घुलने से उनकी चौड़ाई बढ़ती जाती है और बीच के अवशिष्ट भागों में छोटी-छोटी नुकीली पहाड़ियाँ-सी खड़ी रह जाती हैं। इस प्रकार की स्थलाकृतियों को लैपीज या अवकूट कहा जाता है। इन्हें 'कारेन', 'क्लिट' तथा 'बोगाज' के नाम से भी पुकारते हैं।

2. घोल रन्ध्र (Sink or Solution Holes)-वर्षा का जल चुनायुक्त प्रदेशों में सक्रिय रहने के कारण पहले छोटे-छोटे छिद्रों का निर्माण करता है। बाद में इन छिद्रों का आकार बड़ा हो जाता है, जिन्हें घोल रन्ध्र कहा जाता है। यह प्रक्रिया अवकूट के बाद में होती है। इनकी गहराई 3 मीटर से 30 मीटर तक पायी जाती है। इन्हें 'ऐवंस' तथा 'स्वालो होल्स' के नाम से भी पुकारते हैं।

3. युवाला या विलयन रन्ध्र (Uvalas)-घोल रन्ध्र परस्पर मिलकर बड़े छिद्रों का निर्माण करते हैं; अर्थात् घोल रन्ध्र से बड़ी भू-आकृति को विलयन रन्ध्र कहते हैं। कभी-कभी आकार इतना विस्तृत होता है कि इनमें भूमिगत नदियों का लोप हो जाता है जिनसे उनकी धरातलीय घाटियाँ सूख जाती हैं। कभी-कभी इनका निर्माण गुफा के नीचे पँस जाने से भी होता है। छोटे-छोटे विलयन रन्ध्रों को जामा' कहते हैं। इन्हें सकुण्ड भी कहा जाता है।

4. पोलजे या राजकुण्ड (Polje)-सकुण्डों से अधिक बड़े गत को 'राजकुण्ड' कहते हैं। वास्तव में यह सकुण्ड का विस्तृत रूप होता है। अनेक सकुण्डों के मिलने से राजकुण्डे का निर्माण होता है। इनका आकार प्रायः 259 वर्ग किमी तक देखा गया है। इन्हें 'काकपिट' भी कहा जाता है। इनका विकास जमैका में अधिक हुआ है।

5. पॉकेट घाटियाँ (Pocket Valleys)-इन घाटियों को 'स्टीप हैड' भी कहा जाता है। अनेक स्थानों पर मूंगे की चट्टानें इतनी पारगम्य होती हैं कि उनके तीव्र ढाल वाले मुख के आधार से जल । रिसता रहता है। यहाँ पर गड्ढे उत्पन्न हो जाते हैं जिनका सिर सीधा तथा फर्श समतल होता है। घुलन क्रिया द्वारा जब गड्ढे बड़े हो जाते हैं तो इन्हें पॉकेट घाटियाँ भी कहते हैं।

6. अन्धी घाटियाँ या कार्स्ट घाटियाँ (Blind Valleys or Karst Valleys)-जब धरातलीय नदियाँ घोल रन्ध्र, विलयन रन्ध्र आदि छिद्रों से प्रवेश करती हैं तो आगे चलकर अचानक ही इनका जल समाप्त हो जाता है। यदि वर्षा अधिक हो जाये तो नदियाँ कुछ दूर आगे बहने लगती हैं। इस नदी घाटी का आकार अंग्रेजी के 'U' अक्षर की भाँति होता है। जैसे ही वर्षा की मात्रा कम होती है, इन घाटियों का जल छिद्रों द्वारा नीचे बहता जाता है एवं घाटी सूख जाती है। इन्हें ही 'अन्धी घाटियाँ' अथवा 'कार्ट घाटियाँ' कहा जाता है।

7. शुष्क लटकती घाटियाँ (Dry Hanging Valleys)-इन्हें 'बाउरनेज' नाम से भी पुकारा जाता है। जो नदियाँ चूना क्षेत्रों के बाहर से बहती हुई आती हैं, वे अपरदन द्वारा अपना मार्ग गहरा काट लेती हैं। इससे वहाँ का जल-स्तर नीचा हो जाता है। इन नदियों की सहायक नदियाँ, जो चूने या चॉक क्षेत्रों में प्रवाहित होती हैं, अधिक जल से युक्त नहीं होतीं तथा उनका जल घोल रन्ध्रों आदि से भूमिगत मार्गों द्वारा बह जाता है जिससे ये शुष्क दिखाई देती हैं। इन्हें शुष्क घाटियाँ कहते हैं। कुछ समय पश्चात् इनको तल मुख्य नदी की अपेक्षा इतना ऊँचा हो जाता है कि इन्हें, शुष्क निलम्बी घाटियाँ अथवा शुष्क लटकती घाटियाँ कहने लगते हैं।

8. हम्स या चूर्ण कूट (Hums)-जब किसी अपारगम्य शैल पर स्थित चूने की शैल घुलन-क्रिया द्वारा पूर्णतया नष्ट हो चुकी होती है तो उसके अन्तिम अवशेष को हम्स या चूर्ण कूट कहते हैं। इनका दूसरा नाम 'मोनाडनाक' भी है।

9. टेरा-रोसा (Terra-Rossa)-भूमि द्वारा जब वर्षा का जल सोखा जाता है तो धरातल की ऊपरी | पपड़ी के अनेक अंश घुलकर बह जाते हैं जिससे इस मिट्टी की रासायनिक संरचना में परिवर्तन हो जाता है। प्रायः इस क्रिया में लाल मिट्टी का निर्माण होता है। इसकी परतें कहीं-कहीं मोटी होती हैं। तथा कहीं पर महीन जिससे यह धरातल को ढक लेती है। इन्हें ही 'टेरा-रोसा' कहा जाता है।

भूमिगत जल का परिवहन कार्य

मन्द गति होने के कारण भूमिगत जल का परिवहन कार्य अधिक महत्त्व नहीं रखता। वर्षा के जल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस होने के कारण इसकी घोलन शक्ति बढ़ जाती है जिससे यह चट्टानों को आगे की ओर बहा ले जाता है। भूमिगत जल घोल के रूप में अधिक कार्य करता है, परन्तु धरातल पर प्रत्यक्ष रूप में इससे कोई भू-आकृति नहीं बनती। यही कारण है कि भूमिगत जल का परिवहन कार्य अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है।

भूमिगत जल का निक्षेपात्मक कार्य

भूमिगत जल का निक्षेपण कार्य अधिक महत्त्व रखता है, क्योंकि जल में खनिज लवणों को घोलने की अपार शक्ति होती है। इस जल में मैग्नीशियम, कैल्सियम कार्बोनेट, सिलिका एवं लोहांश की अधिकता होती है। इन खनिज लवणों की अधिकता के कारण यह जल अधिक आगे नहीं बढ़ पाता; अतः उसको निक्षेपण प्रारम्भ हो जाता है। निक्षेपण की इस क्रिया के लिए निम्नलिखित दशाओं का होना आवश्यक है-

- ताप में कमी,
- दबाव की कमी,
- वाष्पीकरण का अधिक होना,
- रासायनिक क्रिया का होना एवं
- गैसों की कमी।

निक्षेपणात्मक स्थलाकृतियाँ ।

भूमिगत जल की निक्षेपण क्रिया द्वारा निम्नलिखित स्थलाकृतियों का निर्माण होता है- :

1. शिराएँ (Veins)-खनिजयुक्त जल जब संधियों एवं भ्रंशों में पहुँचता है तो खनिज पदार्थ उनमें जमकर शिराओं का रूप धारण कर लेते हैं।

2. सीमेण्ट (Cement)-ढीले तलछट में जब भूमिगत जल सिलिका, कैल्सियम कार्बोनेट, आयरन ऑक्साइड आदि का निक्षेप मिला देता है तो यह तलछट कठोर होकर ठोस रूप धारण कर लेती है। भूमिगत जल द्वारा निक्षेप किये गये ऐसे पदार्थ सीमेण्ट कहलाते हैं।

3. स्टेलेक्टाइट (आश्चुताश्म) (Stalactite)-जब कन्दरा की ऊपरी छत से चूनायुक्त अवसाद रिस-रिसकर नीचे फर्श पर टपकता रहती है तो यह अवसाद अपने साथ घुलन क्रिया द्वारा प्राप्त पदार्थों को समाविष्ट किये रहता है। इस जल की कार्बन डाइ ऑक्साइड उड़ जाती है और जल में घुला कैल्सियम कार्बोनेट छत पर अन्दर की ओर जम जाता है। ये जमाव लम्बे किन्तु पतले स्तम्भों के रूप में होते हैं। ये कन्दरा की छत की ओर बढ़ते जाते हैं। इन लटकते हुए स्तम्भों को स्टेलेक्टाइट कहा जाता है। चूंकि स्तम्भ ऊपर से नीचे की ओर लटके रहते हैं; अतः इन्हें 'आकाशी स्तम्भ' भी कहते हैं। ये स्तम्भ छत की ओर मोटे होते हैं और नीचे की ओर पतले, इसलिए इन्हें 'अवशैल' भी कहा जाता है।

4. स्टेलेग्माइट (निश्चुताश्म) (Stalagmite)-कन्दरा की छत से रिसने वाले जल की मात्रा यदि अधिक होती है तो वह सीधे टपककर कन्दरा के फर्श पर निक्षेपित होना प्रारम्भ हो जाता है। धीरेधीरे निक्षेप द्वारा इन स्तम्भों की ऊँचाई ऊपर की ओर बढ़ने लगती है। इस प्रकार के स्तम्भों को स्टेलेग्माइट कहा जाता है। फर्श की ओर ये मोटे तथा विस्तृत होते हैं, परन्तु ऊपर की ओर पतले तथा 'नुकीले' होते हैं।
कन्दरा स्तम्भ

5. कन्दरा स्तम्भ (Cave- Pillars)-स्टेलेग्माइट की अपेक्षा स्टेलेक्टाइट अधिक लम्बे होते हैं। निरन्तर बढ़ते जाने के कारण स्टेलेक्टाइट कन्दरा के फर्श पर पहुँच जाता है। इस प्रकार के स्तम्भ को कन्दरा-स्तम्भ कहते हैं। कभी-कभी स्टेलेक्टाइट एवं स्टेलेग्माइट दोनों के एक-दूसरे की ओर बढ़ने से तथा आपस में मिलने से भी कन्दरा-स्तम्भों का निर्माण हो जाता है।

प्रश्न 5. समुद्र विभेदी अपरदन क्या है? इस क्रिया द्वारा निर्मित मुख्य स्थलाकृतियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर—समुद्रतटीय प्रदेशों में सागरीय तरंगों अपरदन का महत्त्वपूर्ण साधन होती हैं। इस कार्य में समुद्री धाराएँ, ज्वारभाटा और सागरों में उठे तूफान भी सहयोग प्रदान करते हैं। समुद्रतटीय प्रदेशों में इस प्रकार होने वाला अपरदन ही विभेदी अपरदन कहलाता है। यह अपरदन निम्नलिखित कारकों द्वारा प्रभावित होता है।

1. सागरीय तरंगों का आकार एवं शक्ति।
2. ज्वारभाटा की तीव्रता।
3. जलस्तर के मध्य स्थित तट की ऊँचाई।
4. चट्टानों की संरचना एवं संगठन।
5. जल की मात्रा एवं गहराई।।

सागरीय तरंगों द्वारा तीन प्रकार से अपरदन कार्य सम्पन्न होता है

- सागरीय तरंगों जब अपनी पूरी शक्ति के साथ तट की ओर बढ़ती हैं तो चट्टानों की दरारों में हवा बड़ी तेजी से भरती है। चट्टानों से टकराकर जब सागरीय तरंग वापस होती हैं, तब यह दबी हुई हवा बहुत तेजी से फैलकर चट्टान को तोड़ देती है।
- जब तरंगें बजरी और बालू से भरी होती हैं, तब तटीय चट्टानों को तेजी से अपरदित करती हैं। क्योंकि इनके साथ जल के अतिरिक्त चट्टानी पदार्थ भी अपरदन में सहयोग प्रदान करता है।
- चूनायुक्त चट्टानों को सागरीय तरंगें जल के साथ घोलकर अपरदन करती हैं।

स्थलाकृतियाँ—सागरीय तरंगों की अपरदन क्रिया से समुद्री भृगु, गुफा, स्टैक तथा मेहराब आदि स्थलाकृतियाँ निर्मित होती हैं।

1. सागरीय भृगु—समुद्र के सीधे खड़े तट को समुद्री भृगु कहते हैं। प्रारम्भ में सागरीय तरंगें तटीय चट्टानों को अपरदित करके खाँचे बनाती हैं। धीरे-धीरे जब यह खाँचे चौड़े और गहरे हो जाते हैं तो इनका आकार

खोखला हो जाता है और तटीय चट्टान का ऊपरी भाग ढहकर गिर जाता है। इस प्रकार समुद्री भृगु अपरदन प्रक्रिया से पीछे हटते रहते हैं। भारत के पश्चिमी तट पर यह स्थलाकृति देखी जाती है।

2. समुद्री गुफा-जब ऊपरी चट्टान कठोर तथा निचली चट्टान कोमल होती है तो सागरीय तरंगों नीचे की कोमल चट्टान का कटाव कर देती हैं तथा ऊपर की कठोर चट्टान बनी रहती है। इस प्रकार समुद्री गुफा बन जाती है। ऊपरी कठोर चट्टान इतनी दृढ़ होती है कि वह बिना आधार के भी टिकी रहती है।

3. समुद्री मेहराब-जब सागरीय तरंगों गुफा के दोनों ओर से अपरदन करती हैं तो चट्टान के आर-पार एक सुरंग बन जाती है और चट्टान का ऊपरी भाग पुल की तरह बना रहता है। इसे समुद्री मेहराब या प्राकृतिक पुल (Natural Bridge) कहते हैं।